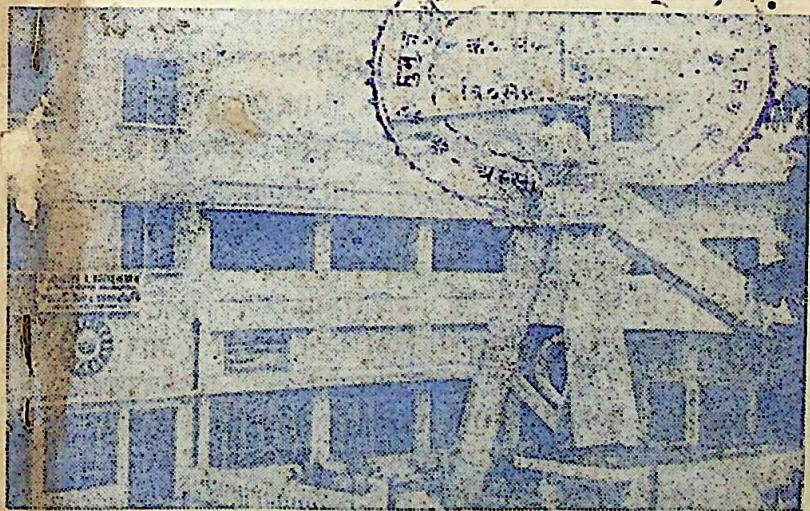


# मानव मन्दिर



फकीर लायब्रेरी चैरीटेबल ट्रस्ट  
सुतेहरी रोड, होशियारपुर  
द्वारा अमूल्य भेंट

संस्थापक:- परम संत परम तयाल पं: फकीर चन्द जी महाराज

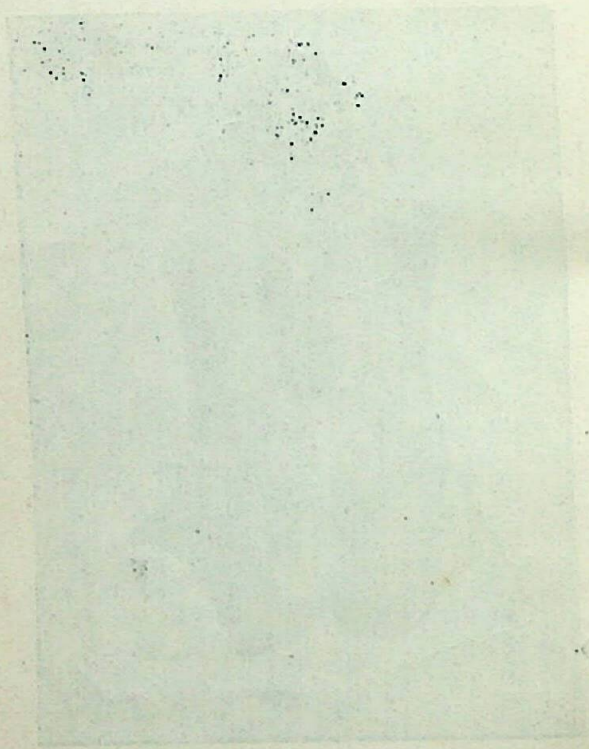


पुस्तक संख्या : 1000  
पुस्तक नाम : हिन्दू धर्म





**Param Sant Manav Dayal**  
**Dr. I. C. Sharma Ji Maharaj**



Dr. J. C. Sharma B. Sc. (Hons.)  
Principal, Banu Mahal, Varanasi



मासिक :

# मानव मन्दिर

विश्व में मानव मात्र के सामाजिक, सांस्कृतिक,  
और आध्यात्मिक कल्याण और विकास को  
सेवा में संलग्न मासिक पत्र ।



सम्पादक :

श्री प्रेम प्रकाश शर्मा

---

वर्ष 25

शुक्रवार 10 अक्टूबर, 1997

संख्या 6

---

# राधास्वामी योग

## दूसरा भाग

हजूर दाता दयाल महर्षि  
शिवबूत लाल जी महाराज

ॐ योग की प्रथम विधि ॐ

### तेतीसवाँ वचन

अपनी समझ कारण अवस्था में

जाग्रति गई। स्वप्नावस्था गई। न यह है और न वह है। शरीर गतिहीन पड़ा हुआ है और मन भी गतिहीन है। इसी दशा का नाम सुषुप्ति या गहरी नींद है। इसमें आकर मन भी अपनी कला-बाजियां भूल जाता है। तुम हो, मगर मन और शरीर नहीं है। मालिक ने अपने मन और शरीर रूपी यन्त्रों से सम्बन्ध तोड़ दिया। उनको यहां बढई के औजार की तरह रख दिया और आप इस समय आराम में है। न उसे अब सूक्ष्मता



को ध्यान है न स्थूलता का । न संसार के भोग-विलास की ही इच्छा है ।

मगर वह है । स्वयं है, अकेला है, सुख में है, आनन्द में है और आप अपना आनन्द ले रहा है । उसे न अब चोर को चोरी का डर है । न डाकुओं के डाका मारने का भय है और वही सन्तुष्ट और स्वाधीन होकर, अपना सुख भोग रहा है । वह स्वयं सुख का रूप है, क्योंकि यदि वह स्वयं सुख का रूप न होता तो दूसरों के आधीन रहता, मगर आधीनता तो है नहीं और न किसी को परवाह है । वह तुम ही हो । कोई दूसरा नहीं है । तुम सोचते नहीं, इस कारण से सुक्ति के झंझट में पड़े रहते हो ।

सुषुप्ति या गहरी नींद की दशा ही वास्तव में सुख की दशा है और वह ऐसा सुख है कि जिसकी कोई भी मिसाल नहीं है ।

क्या इससे तुम को इन्कार है ?

आदमी दुनिया का काम करते-करते घबरा जाता है । धन-दौलत, सन्तान, मान-बढ़ाई, नाच-रंग की महफिल बाह्य भोग-विलास के सामान सब ही कुछ हैं । मगर वह कहता है जरा नींद ले लेने दो । क्या, इससे यह प्रमाणित नहीं होता कि यह नींद स्वयं समस्त सुखों से बढ़-चढ़कर है । थोड़ा सोचो तो सही ! अगर दुनिया के भोग-विलास ही में सुख होता तो तुम उन्हें कैसे छोड़ते और नींद के सुख को उन सबसे बढ़कर कसे समझते । इसका कोई



कारण भी हैं कि जिससे तुम उनसे मुंह मोड़कर उनके अनुरागी होते हो या यह यों ही हैं। बिना कारण के कभी कोई कार्य नहीं होता। कारण का होना दुनियां में आवश्यक बात है। कारण यह है कि तुम अपने आपे या जात के सुख को सबसे अधिक श्रेष्ठ समझते हो।

यह अब किसी अंश तक तुम्हारी समझ में आ गया कि सुषुप्ति में सुख है, गहरा सुख है और सबसे बढ़कर सुख है। जितना चाहो इन्कार करो, तर्क करो, मगर मन बिना माने न रहेगा कि यह सच्ची और खरी बातें हैं।

हां! तुमको कई प्रकार से विरोध करना सूझेगा और तुम उस स्वतन्त्र सुख के भोगते हुए भी यह तर्क करोगे कि यह दशा यद्यपि आराम और सुख की अवश्य है तथापि रुचिकर नहीं है। हम पूछेंगे तुम ऐसा क्यों कहते हो? और तुम जवाब दोगे कि उसमें अज्ञान है और अविद्या है और उसकी स्मृति नहीं रहती। हम पूछते हैं कि तुम्हारा यही तर्क है या और कुछ? तुम कहोगे इन्हीं प्रश्नों का उत्तर दे दो और सन्तुष्टि हो जायगी।

हम कहते हैं बहुत अच्छा। अब तुम हमारे दृष्टिकोण से इस विषय पर विचार करो। सुषुप्ति में अनजानपना नहीं है और न अज्ञानता है, क्योंकि तुम जिस समय उस दशा से उठते हो ता तुरन्त कहने लग जाते हो—“आहा! कैसे सुख की दशा प्राप्त हुई थी”। यह अज्ञानता और बेखबरी है या इसमें किसी प्रकार का ज्ञान और खबरदारी

है ? यदि वह बिल्कुल ही नादानी और बेखबरी होती तो तुमको जानकारी कैसे होती कि वह सुख की हालत हैं। यहां तो तुम अपने ही शब्दों से जानकर और ज्ञाता मालूम होते हो। अनजाने या अज्ञानता की सूचना देना तो एक तरह का ज्ञान है और तुम इस ज्ञान से अनभिज्ञ नहीं हो। लो, तुम्हारा तर्क स्वयं तुम्हारी ही बातों से कट गया। अब रही दूसरी बात की स्मृति नहीं रहती। भाई ! थोड़ा बुद्धि से काम लो। यह तुम कहते क्या हो ? यदि तुम्हें उस सुख की याद न होतो तो तुम उसके सुख की सूचना हमको कैसे दे सकते। तुम जानते हो, जानकार हो। तुम्हें उसके आनन्द की याद है तब तो स्मरण करा रहे हो। वैसे तो कभी सम्भव नहीं था। लो यह तर्क भी कैसी सुन्दरता से काट दिया गया।

लेकिन अभी पूरी-पूरी बातें नहीं कही गई हैं। केवल अंश मात्र तुमको समझाया जा रहा है। आगे चलकर अभी बहुत कुछ समझाना है।

इन तीन अवस्थाओं की दशा पर विचार करने से तुमको केवल इतना ब्रताना था कि जिस सुख की तुम इच्छा रखते हो वह तुम में है और तुम आप ही सुख हो। इस गहरी नींद अर्थात् सुषुप्ति के परे भी अभी आध्यात्मिक अवस्थायें बाकी हैं, मगर उनका न तो तुमको अनुभव है और न तुम समझ सकते हो। इस कारण से इस समय इसको यहीं रोक दिया जाता है।



यह सुख की मिसाल थी, जिसे आनन्द कहा जाता है। ठीक इसी प्रकार सत और चित की भी दशा है। यह भी तुम में है और वह तुम आप हो हो, लेकिन शरीर के छयाल से शारीरिक और मन के छयाल से मानसिक बने हुए हो। तुम अपनी छान-बीन नहीं करते। इस कारण से व्यर्थ द्विचिताई में रहते हो।

तुम्हारी सत्ता (हस्ती) से शरीर और मन की सत्ता है। तुम्हारे ही चित्त से इनमें विवेक या चेतन्य शक्ति है। थोड़ा शब्द याग का अभ्यास करके इनसे अपनी धार को खींचकर देखो, तब पता लगे।

सत्ता (हस्ती) तुम में है, क्योंकि जाग्रति, स्वप्न और सुषुप्ति तीनों ही को तुम अपनी हस्ती देकर प्रकाशित करते हो। तुम स्वयं जाग्रति, स्वप्न और सुषुप्ति नहीं हो, किन्तु यह तीनों ही तुम्हारे कारण से हैं और अपनी सत्ता के लिये तुम्हारे आधीन हैं। ऐसे ही ज्ञान की दशा है। ज्ञान तुम से है, तुम में है। तुम्हारे अन्दर है और तुम आप ही ज्ञान हो। यदि तुम में जीवन न होता तो सम्भव नहीं था कि यह एक क्षण के लिए रह सकता। यदि तुम में ज्ञान न होता तो इनके व्यवहार में ज्ञान की सूरतें कैसे पैदा हो सकती थीं। केवल सोचने की बात है और कुछ भी नहीं। शरीर तुम्हारी ही धार से सुख, जावन और ज्ञान के व्यवहार करता है। मन तुम्हारी ही धार से सत, चित्त और आनन्द के स्वाद में व्यस्त रहता है।

रूह (आत्मा) स्वयं तुम्हारी धार से सत्ता, ज्ञान और आनन्द का भण्डार बनी हुई है। इन तीनों से परे तुम्हारा दर्जा है। तुम स्वरूप हो यह गुण हैं। तुम सेव्य हो, यह सेवक हैं। तुम विजयी हो, यह विजित हैं।

शरीर से सत्ता (हस्ती) का पता लगता है। मन से केवल सत्ता (हस्ती) और ज्ञान का अनुमान होता है और रूह (आत्मा) सत्ता, ज्ञान और आनन्द तीनों का भण्डार है।

जाग्रति में देह की गति है। स्वप्न में मन की गति है और सुषुप्ति में रूहानियत है, मगर देह और मन भी रूहानियत से खाली नहीं हैं। वह रूह के बिना नहीं रह सकते।

तुम शायद यह कहो कि सुषुप्ति से स्पष्ट रूप से सत्ता, चित्त और आनन्द की समझ नहीं आती और तुमको ऐसा कहने का भी अधिकार है, लेकिन यह तो समझो कि जहां दो होते हैं, वहां एक को दूसरे का ज्ञान होता है। जहां दो होते हैं वहां एक को दूसरे की हस्ती (सत्ता) का पता लगता है और जहां दो होते हैं, वहां ही एक दूसरे का आनन्द भोगता है लेकिन सुषुप्ति या गहरा नींद में दो तो नहीं हैं। फिर वहां दो होने की व्यवस्था कैसे है? यह वह स्थान तुम्हारे अन्दर है, जहां ज्ञानी, ज्ञाता और ज्ञान की त्रिपुटी नहीं रहती। जब एक ही है तो फिर एक का बाह्य ज्ञान हो भी तो कैसे हो? सुनो! तुम एकमात्र



सत, एकमात्र चित्त और एकमात्र आनन्द हो तो सत, चित्त, आनन्द अर्थात् सच्चिदानन्द हो। त्रिपुटी के झगड़े में क्यों पड़े हो जो तुम व्यर्थ चिन्तित होते हो। अपनी असलियत को समझो और बस।

## चौतीसवां वचन

### त्रिपुटि का दृश्य

त्रिलोकी की त्रिपुटी— (1) पृथ्वी, अन्तरिक्ष और द्यो या दिव।

जीवन की त्रिपुटि— (1) जाग्रति, स्वप्न और सुषुप्ति।

ब्रह्म की त्रिपुटि—(1) विराट, अव्याकृत और हिरण्य-गर्भ, (2) स्थूल, सूक्ष्म और कारण।

ईश्वर की त्रिपुटि— ब्रह्मा, विष्णु और महेश।

शक्ति की त्रिपुटि— सावित्री, लक्ष्मी और उमा।

धर्म की त्रिपुटि— (1) कर्म, उपासना और ज्ञान।

(2) ज्ञान, ध्यान और समाधि।

प्राणायाम योग की त्रिपुटि— रेचक, पूरक और कुम्भक।

नाड़ियों की त्रिपुटि— इंगला, सुषुम्ना और पिण्गला।

शरीर की त्रिपुटि— देह, मन और आत्मा।

वेदों की त्रिपुटि— ब्राह्मण भाग, संहिता भाग और उपनिषद् भाग ।

अन्य धार्मिक पुस्तकों की त्रिपुटि— पुराण, कर्म और वेद ।

साक्षात्कार की त्रिपुटि— श्रवण, मनन और निदि-  
ध्यासन ।

द्वैताद्वैतवाद की त्रिपुटि— अद्वैत, विशिष्टाद्वैत और  
द्वैताद्वैत ।

वृक्ष की त्रिपुटि— बीज, अंखुआं और वृक्ष ।

सृष्टि की त्रिपुटि— अण्डज, पिण्डज और उद्भिज ।  
(स्थावर भी अण्डज की एक किस्म है । बीज अण्डा  
ही है ।)

युगों की त्रिपुटि— त्रेता, द्वापर और कलियुग ।  
( सतयुग उनका आदर्श है । )

ओ३म् या प्रणव की त्रिपुटि— अ, इ, म ।

काल की रचना की त्रिपुटि—(1) उत्पत्ति, स्थिति और  
प्रलय ।

(2) जन्म, व्यवहार और मृत्यु ।

सन्त मत की त्रिपुटि— सत् गुरु, सत्संग और सत्-  
नाम ।

बुद्धमत की त्रिपुटि— बुद्ध, धर्म और संघ ।

सच्चिदानन्द की त्रिपुटि — सत्, चित और आनन्द ।



यह त्रिलोकी जो तुमको दिखाई दे रही है, असल में त्रिपुटिवाद ही है । जहां नीचे और बीच के और ऊँचे की आपेक्षिक श्रेणियां देखो, वहां समझ लो कि हर जगह त्रिपुटि ही त्रिपुटि है । जहां त्रिपुटि का थोड़ा भी सम्बन्ध रहेगा वहां खँचातानी, वेचैनी और अशान्ति ही होगी । इस कारण से राधास्वामी मत जहां पर त्रिपुटि के दृश्यों को दिखाता है, वहां इसका स्पष्ट शब्दों में आदेश है कि उनमें से कोई भी इष्ट पद नहीं है । इष्ट पद उससे ऊँचा है और उसको राधास्वामी मत में चौथा पद कहते हैं । लेकिन राधास्वामी मत का चौथा पद और मार्गों के चौथे पद से भिन्न है । उसकी समझ उस समय आनी सम्भव है, जब आदमी कुछ दिनों अभ्यास के साथ सत्संग करे । वाणी में इसके इशारे बहुत आये हैं ।

तीन छोड़ चौथा पद दोन्हा ।

सत्त नाम सत् गुरु गति चीन्हा ॥

सत्त पुरुष चौथे पद बासा ।

सन्तन का जहां सदा बिलासा ॥

सो घर दरशाया गुरु पूरे ।

बीन बजे जहां अचरज तूरे ॥ (सार वचन)

इस चौथे पद के आगे और भी स्थानों को व्याख्या आती है, जिनका यहाँ वर्णन नहीं किया जाता है । अवसर आने पर वर्णन किया जायगा ।

## पैंतीसवां वचन

### ईश्वर के अस्तित्व का प्रमाण

यह बता दिया गया है कि आदर्श सच्चिदानन्द है और वह सच्चिदानन्द तुम में है और तुम स्वयं ही हो, मगर तुम उसको ज्यों-का-त्यों नहीं समझते । मत-मतान्तर के तर्क-वितर्क के झगड़ों में पड़कर व्यर्थ व्यथित हुआ करते हो । लेकिन किसी न किसी तरह उसका समझना आवश्यक है । यदि तुम समझ कर अपने अन्दर उसकी तलाश करो तो क्या कहना है । लेकिन धार्मिक भ्रम को क्या कहा जाय । विवश होकर धार्मिक दृष्टि-कोण से शिक्षा देने की आवश्यकता प्रतीत होती है ताकि किसी तरह पर तुम सद्मार्ग पर आओ और भटकते न रहो ।

यदि तुम में इतनी समझ नहीं है तो ईश्वर को सच्चिदानन्द समझकर उसके द्वारा काम बनाने में लगो । जहां हृदय में उभार पैदा हुआ और यदि सौभाग्य से सच्चा गुरु मिल गया तो आगे की बातें स्वयं समझ में आती जायेंगी और तनिक भी कठिनाई न होगी ।

आआ, और ईश्वर की बाबत समझने का प्रयत्न करो । ईश्वर उसको कहते हैं जिसमें ऐश्वर्य अर्थात् शक्ति और महानता हो । यह गुण बोधक नाम है । ज़ाती (निज नाम) नहीं है । ऐश्वर्य अर्थात् शक्ति गुण ही को



कहते हैं जिसमें ऐश्वर्य का गुण हो, उसको ईश्वर कहा जाता है। सच्चिदानन्द भी एक प्रकार का गुण है। जिसमें सत-चित्त आनन्द का गुण हो वही सच्चिदानन्द है। इसका ऊपर जिक्र आ गया है। गुण से काम लेकर तुमको जात (निज स्वरूप) की ओर चलना होगा।

पहिले गुण सहित स्वरूप का ध्यान करो और उसी को मानसिक इष्ट बनाओ। इष्ट आदर्श हुआ करता है। आदर्श यूँ तो बिल्कुल ही मानसिक और आइडियल है, किन्तु आदर्श को दृष्टि में रखकर ही काम करना पड़ता है। लड़का जब सुन्दर अक्षर लिखना सीखने लगता है तो किसी गुरु की लिखावट का नमूना आंखों के सामने रखकर अभ्यास करता है और उसी प्रकार की सुन्दर लिखावट बनाता हुआ किसी समय सुलेख्य की कला को अपने अन्दर और अपने ही में देख लेता है। वह जब सुन्दर लेखक हो जाता है तो सुन्दर लिखावट की कला को फिर अपने से पृथक् नहीं समझता अर्थात् उसने सुन्दर लिखने की कला का साक्षात्कार कर लिया और स्वयं ही इस सुन्दर लेखन कला का आदर्श बन गया। ठीक इसी तरह सत पद के जिज्ञासू को किसी प्रकार के ख्याली आदर्श को सामने रखकर उसका अभ्यास करना पड़ता है। असली आदर्श तो गुरु है जिसकी सहायता से असलियत की समझ आती है और उसी की पैरवी अथवा अनुसरण मुख्य है, लेकिन भ्रमों के होते हुए ईश्वर ही के आदर्श को दृष्टि के सामने रखो। जब वह अच्छी तरह समझ में आ

जाय तो फिर गुरु के आदर्श का ध्यान करो । उसके बिना अध्यात्म मार्ग में गुजारा नहीं है ।

ईश्वर क्या है ? इसकी परिभाषा तो तुमको बता दी गई कि वह असीमित सर्व व्यापक शक्ति और सर्व गुण-निधान है किन्तु कुछ लोग ईश्वर के अस्तित्व ही से इन्कार करते हैं उनकी समझाने बुझाने की अत्यन्त आवश्यकता है । जब तक वह उसे भलो भान्ति न समझ लेंगे तब तक उनमें आस्तिकता उत्पन्न न होगी । जब तक आस्तिकता न आयेगी तब तक योग की शिक्षा निरर्थक होगी । जब कि नींव ही नहीं रखी गई तो उसकी इमारत को कोई कैसे बनाये, क्यों बनाये और क्यों कर बनाये और उससे लाभ ही क्या है । व्यर्थ काम करना कराना मूर्खता है । राधास्वामी मत शुद्ध आस्तिक मार्ग है । जो लोग ईश्वर की सत्ता से इन्कार करते हैं उनको इस मार्ग की पैरवी से कोई लाभ न होगा, किन्तु वह और मानसिक उलझन में पड़ जायेंगे । ईश्वर में श्रद्धा, विश्वास और उसका ध्यान उसकी नींव है ।

राधास्वामी मत ने ईश्वर के अस्तित्व के कई प्रमाण दिये हैं और इस अवसर पर हम उसके केवल दो प्रमाण देंगे ।

पहला प्रमाण तो यह है कि इस जगत के व्यवहार में हर जगह और हर काम में तीन बातें दृष्टिगोचर होती हैं इरादा, (संकल्प) सुन्दरता और कारीगरी (निर्माण कला), और यह तीनों चीजें किसी महान् सकल्पकर्त्ता, किसी महान् सौन्दर्यवान और महान् निर्माण-कर्त्ता के



प्रत्यक्ष प्रमाण हैं। इससे प्रगट होता है कि उस संकल्प-कर्त्ता में सौन्दर्य और कला-कौशल सब कुछ मौजूद हैं। वह चेतन्य हैं और जितने दृश्य उसके हम देखते हैं वे सब हमको उसकी संकल्प शक्ति और कला-कौशल की स्मृति कराते हैं। किसी वस्तु को देखो स्वयं तुमको बोल-बोल कर सुना कर कहती रहेगी कि उसका बनाने वाला कोई है।

हाथी की सूण्ड, ऊण्ट की गर्दन और समस्त पशुओं और मनुष्यों की बनावट उसकी बुद्धि और कौशल का स्वयं प्रत्यक्ष प्रमाण है। अगर सूण्ड न बनाई जाती तो हाथी अपने ऊँचे और भारी सिर के कारण अपना खाना कैसे ले सकता था। यदि ऊण्ट की गर्दन लम्बी न होती तो वह वृक्षों की टहनियों और पत्तों को कैसे नोच-नोच कर खा सकता था। इनमें सुन्दरता और कला-कौशल भी है और साथ ही वह यह भी हृदयांगम कराते हैं कि किसी संकल्प कर्त्ता में अपनी संकल्प शक्ति की इनकी बनावट में निपुणता दिखलाई है। संकल्प चेतन शक्ति का सबसे बड़ा प्रतीक हैं। जो वस्तु चेतन नहीं होती उसमें संकल्प का अभाव होता है। यह हम हर जगह अपने आस-पास के समान में देखते हैं।

लेकिन नास्तिक कहते हैं कि यह जगत् यों ही बन गया है और बनता बिगड़ता रहता है। इसका कोई भी बनाने वाला नहीं। यह बात हम उस समय अवश्य मान लेते, जब हमारे सब सामान, घर और मकान अपने आप बनते होते। यह कहीं भी देखने में नहीं आता। फिर हम कैसे मान लें कि यह जगत् रूपी घर स्वयं बन गया है।

नास्तिक आपत्ति करते हैं कि ईश्वर को इस जगत बनाने की क्या पड़ी थी। यदि उसका इसके बनाने में प्रयोजन है तो प्रयोजन रखने वाला व्यक्ति दोष पूर्ण होता है। यदि वह बिना प्रयोजन के काम करता है तो उन्मत्त है। आपत्ति तर्क पूर्ण है और सोचने के योग्य है। व्यर्थ इन आपत्तियों को सुनकर किसी को हक नहीं है कि वह नास्तिकों से झगडा करे। अपनी-अपनी राय और अपनी-अपनी समझ। कोई दुनियां का ठेकेदार बनकर तो आया नहीं हैं जो हर एक से केवल यों ही उलझता रहे। राधास्वामी मत इस अवसर पर यह जवाब देता है कि रचना करना ईश्वर का स्वाभाविक गुण है और जिसमें जो गुण स्वाभाविक रूप से रहता है वह इसके प्रगट करने में रुजू रहता है। इन आपत्तियों का केवल यही एक जवाब दिया जा सकता है। (क्रमशः)

## महत्वपूर्ण सूचना

सभी सत्संगीजन को सूचित किया जाता है कि मन्दिर को मनीआर्डर आदि भेजते समय अपना पता तथा पिनकोड नं० साफ-साफ लिखें ताकि पढ़ने में किसी प्रकार की कठिनाई न हो और मनीआर्डर आदि केवल संक्रेटरी मानवता मन्दिर या संक्रेटरी फकीर लायब्रेरी चेरिटेबल ट्रस्ट, मानवता मन्दिर, सुतैहरी रोड़, होशियारपुर के नाम पर भेजें। किसी व्यक्तिगत नाम पर नहीं।

जनरल संक्रेटरी  
मानवता मन्दिर, होशियारपुर।



# सार का सार

## परमसन्त परमदयाल

### पण्डित फकीर चन्द जी महाराज

### के सार-गर्भित प्रवचन

भूमिका

अपने कर्म भोग वश अथवा मौज आधीन इस पिछले बसन्त पर मैं हैदराबाद (दक्षिण) की ओर गया था। वहाँ निज अनुभव के आधार पर गुरु ऋण को उतारने के लिए और हुजूर सांवलेशाह (बाबा सावनसिंह व्यास वालों) की आज्ञानुसार मैं सत्संगियों में कुछ कहता रहा।

चूँकि इस समय अजीज देवीचरन भीतल मुख्तार जो दातादयाल के प्रेमी थे और उनकी दातादयाल (महर्षि शिवव्रत लाल जी महाराज) ने पण्डित का खिताब दिया हुआ था और उनके 'सुमेरु पर्वत', 'महारामायण' आदि के प्रकाशित करने में उनका हाथ होता था, यह भी मेरे साथ दौरे पर रहे। इन्होंने जो कुछ मैंने कहा उसको नोट

किया हुआ है और अब वचनों को “सार का सार” नामी पुस्तक रूप में प्रकाशित करना चाहते हैं और मुझ से दरखास्त की है कि उसकी भूमिका लिखकर भेजूं ।

मुझे कुछ याद नहीं कि मैंने इन सत्संगों पर क्या कहा । सत्संग के समय मौज जैसी प्रेरणा करती है कहता रहता हूं और यह प्रेरणा मेरी अपनी इच्छा के अनुसार नहीं होती । बाह्य प्रभाव जैसे-जैसे दिमाग पर पड़ते हैं वैसा-वैसा विचार स्वाभाविक रूप से मेरे अन्तर पैदा होता रहता है और मैं बोलता रहता हूं ।

दातादयाल महर्षि जी की दया से मैं निष्काम, निष्कपट निस्वार्थ हो गया हूं । मेरा मन मौजूद है मगर यह अपने लिये कुछ नहीं चाहता है । हुजूर साँवलेशाह व्यास वाले कहा करते थे—एक सच्चा सन्त या फकीर उसको जो उसके सामने जाता है अपना ही रूप देखता है ।

इसलिए मैं महसूस करता हूं कि जो कुछ भी इन सत्संगों में कहा होगा आम पबलिक के सच्चे जिज्ञासुओं, शान्ति के इच्छुकों अथवा राष्ट्रीय स्थितियों से दुःखी हुए प्राणियों के भावों का हल या उत्तर होगा जिससे उनकी चित्त वृत्ति को सन्तुष्टि, शान्ति सहो तदवार या राय मिली होगी । मैंने चूंकि सतगुरु की दया से वह भेद या राज प्राप्त कर लिया है जिसके समझने से मैं इस अशान्त, और परिवर्तनशील दुनियां में रहता हुआ भी शान्तिमय रह सकता हूं, यद्यपि परिवर्तन के दृश्य—शारीरिक, घरेलु, राष्ट्रीय और सामाजिक, जाग्रत अवस्था में सामने आते



रहते हैं मगर इनका आना ऐसे ही हैं जैसे एक स्वप्नदर्शी स्वप्न देखता है और बस !

चूँकि मेरे जिम्मे मौज ने ड्यूटी लगाई हुई है मैंने जो कुछ निज अनुभव के आधार पर समझा वह कहा । न मुझे अपने नाम की, डेरे या धाम या धन मान की गरज है और न मैं किसी पन्थ, सम्प्रदाय का पक्षपाती हूँ । दातादयाल महर्षि जी के स्वरूप में अपने विश्वासानुसार मैंने उस परमतत्व आधार अकाल, अनाम पद को माना था । उन्होंने मेरे भ्रम और अज्ञान को दूर करने के लिये मेरे साथ खेल खेले और यह आचार्य पद मुझको मेरे भ्रम और अज्ञान दूर करने को दिया था । वह दूर हो गया । मैं अब हर प्रकार के बन्धन से मुक्त हूँ ।

मेरा प्रयत्न या भाव यह है कि मनुष्य अपने आपको जाने और फिर इस संसार में जीवन मुक्त या विदेह गति में रहता हुआ आनन्दमय, वेगम, बेफिक्र रहे और अचिन्त रहे । मैंने सारा जीवन इस लाइन में सच्चाई से गुजारा है और इस परिणाम पर आया हूँ कि हर एक मनुष्य एक चेतन्य का बुलबुला है जिसको सन्त सुरत कहते हैं । वह एक महान परमतत्व आधार है । जो गो गोचर, दृश्य और अदृश्य से अलग वस्तु है । मनुष्य जो चेतन्य का बुलबुला है स्वाभाविक मौज से प्रगट होता है और इसी में समा जाता है । इस चेतन्य के बुलबुले के ऊपर इस प्रकृति के भिन्न-भिन्न खोल, गिलाफ या परदे आ जाते हैं और वह इन पदों, गिलाफों और शरीरों में रहते

हुए दुःख सुख, हर्ष शोक आदि का भान करता है । सत्संग और साधन से वह पद हट जाते हैं और मनुष्य को अपने रूप का ज्ञान हो जाता है । उस समय वह जीवन मुक्त अवस्था या विदेह गति में आ जाता है और साथ ही यदि प्रकृति का ज्ञान हो तो उस ज्ञान से अपने शारीरिक मानसिक, धरेलू, पोलिटीकल जीवन को बहुत कुछ उच्चतर बना सकता है । मुझे पूरा यकान है कि जो लोग मेरे इन भाषणों को गौर से पढ़ेंगे उनके संशय, भ्रम और शंकायें दूर होंगी और यदि वह साधन भी करेंगे तो वह जीवन मुक्त अवस्था को प्राप्त कर लेंगे और इन वचनों पर चर्चा से अपना सांसारिक, सामाजिक और राष्ट्रीय जीवन भी बेहतर बना सकेंगे ।

### मगर

निज अनुभव के आधार किन्तु होसले से कहना चाहता हूँ कि जिन्होंने अपना शारीरिक और मानसिक ब्रह्मचर्य समय से पहिले किसी कारण से नष्ट कर लिया है उनको देर लगेगी और इस जीवन में यदि सफल न भी हों तो असम्भव नही है । इस मानसिक और शारीरिक ब्रह्मचर्य का सम्बन्ध केवल स्त्री पुरुष जाति **Sex** ही से नहीं है । कभी समय आया तो फिर पूर्ण व्याख्या कर जाऊंगा । मौन आधीन है ।

इन रहस्यों को इस 'सार का सार' में खोला गया है ।

फकीर



# सार का सार

## प्रथम प्रवचन

[ हनमकुण्डा ता. 9-2-62 श्रातः ]

आज बसन्त का दिन है। इस दिन सत्पुरुष राधा-स्वामी दयाल ने सत्संग का सिलसिला जारी किया था। मैं ब्राह्मण वंश में पैदा हुआ था, इसलिये हिन्दू धर्म, हिन्दू शास्त्रों और हिन्दू शास्त्रों के संस्कार बचपन से थे। उस परमतत्व, आधार, राम या मालिक के मिलने और आवागमन से बचने की इच्छा थी। मेरी इच्छा या मौज मुझे दातादयाल महर्षि शिवब्रतलाल जी महाराज के चरणों में ले गई, जिनको मैं अपने विश्वासानुसार राम या मालिक का अवतार मानता था। मैं पहिली बार 1905 ई. में उनके चरणों में गया था। उन्होंने मुझे राधास्वामी-मत की शिक्षा दी और 'सार वचन पद्य' (स्वामी जी की वाणी) पढ़ने को दी। वहाँ माया संवाद में स्वामी जी ने तमाम मतों को काल-मत कहा है। इसी वाणी का एक भाग 'हिदायतनामा' है। इसमें योग की श्रेणियों का हाल है। उसमें यह भी वर्णन है कि सन्त ईश्वर परमेश्वर

के कर्त्ता होते हैं। उस समय मैंने यह प्रण किया था कि मैं इस तथ्य या सच्चाई का अनुभव करूंगा और जो अनुभव होगा वह सर्वसाधारण को बता जाऊंगा। इसलिए यह जो मैं सतसंग का काम करता हूं यह किसी पर अहसान नहीं है किन्तु जैसी वासना थी या जैसा संकल्प किया था वह सामने आ रहा है।

आज इस वसन्त पञ्चमी के दिन मैं इस शिक्षा का वर्णन निज अनुभव के आधार पर करना चाहता हूं कि जो मैंने समझा है या जिस निष्कर्ष पर मैं पहुंचा हूं।

दातादयाल कहा करते थे कि जिस वस्तु को देखो ध्यान से देखो पूरी तरह से देखो। मेरी स्त्री बीमार है। ख्याल आता है कि क्यों बीमार है। मैं प्रायः उसके लिए दवा को डाक्टर के पास जाता हूं। उसके पास एक साल छः छः माह के बच्चे आते हैं। कोई कुछ बीमार कोई कुछ। माना कि मेरी स्त्री ने कोई बुरे कर्म किये होंगे जिससे रोगी है मगर छोटे बच्चों ने क्या बुरे कर्म किये जो वे कष्ट उठाय। उत्तर होता है कि या तो उन बच्चों का प्रालब्ध कर्म है और यदि इन कर्मों को न मानें तो यह मानना पड़ेगा कि यह कर्त्ता पुरुष का खेल है। एक चीज माननी पड़ती है अर्थात् या तो कर्मों का फल है या बनाने वाले का खेल है।

इस युग का प्रभाव ऐसा है कि मानव जीवन में क्रान्ति (Revolt) करता है। सन्तों ने भी क्रान्ति की। वे कहते हैं कि दुनियां रचने वाला निर्दयी है। यह काल



है। कबीर को वाणी में काल की कराल कहा गया है। मैं उस भगवान को मानने वाला था जिसने दुनियां बनाई है। मुझ पर उन महापुरुषों के वचनों का प्रभाव पड़ा। मैं विवश हुआ कि जहां तक इस रचना का सम्बन्ध है यह देखूं कि यदि इसके रचने वाला निर्दयी है तो कोई जगह है जहां निर्दयता नहीं है अर्थात् जहां दयालता हो, जहां सुख-दुःख न हो। यही खयाल दातादयाल ने मुझे दिया था। वह कैसे दिया ? चूंकि मैं दुःखों से बचना चाहता था उन्होंने सन् 1921 में यह शब्द मेरे नाम लिखा—

### काल-चक्र

काल चक्र है सहज हिंडोला, झूला अचरज न्यारा ।  
 सब कोई झूले झूला चढ़कर, काल झुलावन हारा ॥  
 चन्द्र सूर दोऊ गगन में झूलें, झूलें नव लख तारे ।  
 जीव जन्तु पृथ्वी में झूलें, नर पशु सकल विचारे ॥  
 राजा झूला रानी झूली, और प्रजा समुदाई ।  
 ब्रह्मा विष्णु महेश्वर झूले, झूली सब दुनियाई ॥  
 लक्ष्मी झूली दुर्गा झूली, गायत्री महारानी ।  
 देवा झूले देवी झूलीं, नभ थल अग्निनी पानी ॥  
 काल भी झूला अपने झूला, सृष्टि प्रलय कर प्यारे ।  
 वह भी बचा न चक्र से अपने, झूला झूले सारे ॥

चढ़ी पैंग जब ऊँचे आये, उतरी नीचे ठहरे ।  
कभी मिले तो जमघट देखी,

बिछुड़ के हो गए न्यारे ॥

एक दशा में नित जो धरते, कोई नजर न आया ।  
पीर पैगम्बर कुतुब ओलिया,

ऋषि मुनि बच नहीं पाया ॥

पानी भया पाप की सूरत, घाया गिरि कैलासा ।  
बरफ बना धारा बह निकली, नीचे किया निवासा ॥

नीचे भी रहने नहीं पाया, फिर ऊँचे की आशा ।  
हम तो देखें खुली दृष्टि से, अचरज अजब तमाशा ॥

लकड़ी जलकर कोयला हो गई,

कोयला राख और माटी ।

माटी माटी में नहीं ठहरी, बनी काठ और लाठी ।

विष्टा अन्न अन्न भया विष्टा, सोई सब को खावे ।

यह प्रपञ्च है अद्भुत न्यारा,

कोई बिरला लख पात्रे ॥

जाग्रत स्वप्न सृष्टि लीला, कभी ऐसी कभी वैसी ।

यह सब कल बली की माया,

कभी जैसी कभी तैसी ॥

पण्डित कभी अनाड़ी होते,

कभी अज्ञानी ज्ञानी ॥

कभी जड़ मिलजुल चेतन ठहरे,

कभी चेतन जड़ जानी ॥



समुझत बने कथन नहि आवे, मन बानी अलसानी ।  
 कोई कैसे समझावे किसको, समझे कोई गुरु ज्ञानी ॥  
 एक दशा में कोई न वरते, कभी बेठा कभी दौड़ा ।  
 कभी थका कभी सोया लेटा, काल चक्र अति चौड़ा ॥  
 झूले की है विचित्र कहानी, कथा वार्ता न्यारी ।  
 नर को हम समाझवन आये, सुने न बात हमारी ॥  
 दुःख सुख, सुख दुःख द्वन्द पसारा,

द्वन्द से प्यार बढ़ाया ।  
 द्वन्द भाव से जगत रचाया, द्वन्द के फांस फंसाया ॥  
 मन बुद्धि और चित हंकारा, सो झूले की रसरी ।  
 दौलड़ त्रयलड़ चौलड़ बन आई,

जीव निबल को जकड़ी ॥  
 जकड़े माया के फन्दे में, रोवे और चिल्लाये ।  
 शोर मचाये बहु चिल्लाये, छूटन विधि नहि पाये ॥  
 तब दयाल' को दाया लागी, सन्त रूप धर आया ।  
 राधास्वामी अचल मुकामी, 'सालिगराम' कहाया ॥  
 नर शरीर में प्रगटा आकर, जीवन बहुत चिताया ।  
 जो कोई जीव शरण में आया, अपनाकर अपनाया ॥  
 सुन 'फकीर' यह गुरु उपदेशा, मैं भी तुझे सुनाऊं ।  
 बात जो मेरी मन से माने, इस झूले से बचाऊं ॥  
 खेल खिलाऊं सुगम सुहेला, सुरत शब्द मत गाऊं ।  
 काल हिंडोले से तू बाचे, विधि विचित्र समझाऊं ॥  
 कर सत्संग विवेक से गुरु का, गुरु दयाल हितकारी ।  
 साधू बनकर साध ले युक्ती, जा झूले को पारी ॥

नर शरीर सुर दुर्लभ पाया, सत संगत में आया ।  
 तेरा दाव पड़ा है पूरा, सोच समझ तज माया ॥  
 अब की चूके मौज न ऐसी, त्याग काल की आसा ।  
 आज का साधन आजहि करले,

कल को होगा उदासा ॥

बार बार नहि अवसर प्रानी, काल महा दुखदाई ।  
 जो कोई करे काल की आसा, सो पीछे पछिताई ॥  
 राधास्वामी दया के सागर, तेरे कारन आये ।  
 सीस चरन में उनके झुकाकर, अपना काज बनाये ॥  
 राधास्वामी राधास्वामी राधास्वामी गाना ।  
 मन बच कर्म से भक्ति करना, जूले बाहर आना ॥

यह शब्द आपने सुन लिया । मैं बड़ा अज्ञानी था ।

बचपन की शादी के कारण मन अधिक कञ्चल था इस-  
 लिए उस उपदेश को जो दातादयाल ने मुझे दिया था  
 समझ नहीं सकता था । दातादयाल ने यह देखकर कि  
 यह आदमी सच्चा है मगर मन की चञ्चलता से बात  
 इसकी समझ में नहीं आती है मुझे आचार्य पदवी दी ।  
 सन् 1919 ई. में पांच पैसे और नारियल रखकर मुझे  
 नमस्कार किया लेकिन तब यह समझते होंगे कि मैं कोई  
 महापुरुष था । यह बात नहीं, उन्होंने मेरे सुधार को यह  
 खेल खेला था । यह कहा था कि फकीर यह न समझना,  
 कि तुम किसी का बेड़ा पार करोगे मगर राधास्वामी  
 घाम में वासा दिलाने वाला सतगुरु सत्संगियों के रूप में  
 तुमको प्राप्त होगा । मैंने आचार्य पदवी ग्रहण की । मैं इस



काल और माया के चक्र से निकल नहीं सकता था, इसलिए मुझे यह कार्य दिया गया ।

## काल और माया

मैं बताना चाहता हूँ कि माया नाम है खयाल, भाव व विचार का, चाहे वह भाव विचार धार्मिक हों, चाहे भक्ति के, चाहे भले हों या बुरे । हमारे अन्दर जितने भाव विचार और आशायें हैं चाहे दुनियाँ की चाहे प्रेम या भक्ति की अथवा योग की, सब माया के अन्तरगत हैं । दातादयाल ने इसकी व्याख्या इस प्रकार की है— मा— मापना, या—यन्त्र अर्थात् नापने की वस्तु । उसका नाम माया है । यह हमारी बुद्धि है । वह अच्छी भी है और बुरी भी है ।

मैं दातादयाल से प्रेम किया करता था । उनकी आरती करता, फूल चढ़ाता, रुपया देता, सिंहासन बनाता आदि-आदि । यह सब कम माया का था । मैं उससे निकल न सका । मैं दातादयाल (महर्षि शिव) के रूप को सब कुछ समझकर उनसे प्रेम करता था । इसलिए इस माया के चक्र से निकालने को यह काम सत्संग का मुझे दिया । मैं कैसे निकला । निकालने वाले आप सत्संगी लोग हैं । मेरे पास सैकड़ों सत्संगियों के पत्र आते रहते हैं । वह कहते हैं कि आप हमारे अन्तर प्रगट होते हैं । आपका रूप प्रकाश में हममें प्रगट होता है । किसी को दवा बता देता है, किसी को अभ्यास में चढ़ाई करा जाता है आदि-आदि । हाल की एक घटना सुनाता हूँ—

मध्य भारत में एक गणेशचन्द्र नामी सत्संगी है। एक मास हुआ उसने लिखा कि आपकी आज्ञा अनुसार मैंने कुछ दिन मौन रक्खा। जब मैं रात को 10 बजे अश्यास में बैठा तो देखा कि प्रकाश का एक पहाड़ है। उसकी दृष्टि से एक मील है। उसमें से किरणें निकल रही हैं। उसमें देवताओं का दल निकल रहा है। वह आगे लिखता है कि मैं (फकीर) उसे चोरता हुआ आया। उसे पकड़ कर ले गया। जब होश आया तो उसने यह पत्र मुझको लिखा। अब मैं तो वहां गया नहीं। फिर कौन गया ? जिस प्रकार का विचार, संस्कार, भाव या आशा मनुष्य के अपने अन्तर में होती है और जब वह साधन में बैठता है तो वही भाव और संस्कार प्रगट होते हैं। जब मैं जिन्दा उसके अन्दर नहीं गया तो कैसे कहूं कि देवता उसके अन्दर आये। मैं राघा-स्वामी मत वालों को सच्चा ज्ञान देने आया हूं। क्यों देता हूं ? इसलिए कि दातादया ने एक शब्द मेरे नाम लिख कर आज्ञा दी थी—

देह के बन्ध फकीर जो आवे, बन्ध निरबन्धन सोई ।  
 बन्ध कर बन्धुवे जीव छुड़ावे, समझे यह गति कोई ॥  
 तू तो आया नर देहो में, धर फकीर का भेषा ।  
 दुःखो जीव को अग लगाकर, ले जा गुरु के देशा ॥  
 तीन ताप से जीव दुःखी है, निबल अबल अज्ञानी ॥  
 तेरा काम दया का भाई, नाम दान दे दानी ॥  
 नाम फकीर धराया तूने, काम फकीर का कर ले ।



गुरु की दया साथ ले अपने, भक्ति की झोली भर ले ॥  
 तू इराक से अब के आया, सन्त संगत के कारण ।  
 ले प्रसाद यह सत संगत का,  
 हो जा अब निधि तारण ॥

मैं इसको नहीं समझ सका । मेरे उद्धार के लिए यह सत्संग  
 का काम दिया गया था । उस ऋण को उतारने को मैं  
 सिर खपाता हूँ । मैं वह रहस्य बताने आया हूँ कि लोगों  
 के भ्रम मिट जाय । चूँकि मैं भ्रम में फंसा हुआ था ।  
 अतः दातादयाल मुझको उस भ्रम से निकालने को अनेक  
 प्रकार से चेताया करते थे । इनका एक शब्द भ्रम के विषय  
 में मेरे नाम है । सुनो—

क्यों भरमा फकीर ! क्यों भरमा फकीर !  
 काहे दीवाना हो गया ।  
 गुरु चरण गहाँ, गुरु चरण गहा,  
 ले ठीर ठिकाना हो गया ॥  
 नहि होय अकाज, नहि होय अकाज,  
 जमफन्द कटाना हो गया ।  
 क्यों विकल रहे, क्यों विकल रहे,  
 अब तो मस्ताना हो गया ॥  
 तन विकल हुआ, तन विकल हुआ,  
 गंगा स्नाना हो गया ।  
 सत्संग में आ, सत्संग में आ,  
 जप तप और ध्याना हो गया ॥

क्या नेम धरम, क्या नेम धरम,

जब सत का ज्ञान हो गया ।

नित-नित का कर्म, नित-नित का कर्म,

राधास्वामी गुनगाना हो गया ।

(सेठ चन्द्रकान्ता उर्फ धर्मदास की ओर संकेत करते हुए कहा— धर्मदास से दीवानो ! भेद को समझो, शब्द को पढ़ो, वहां क्या लिखा है ?)

जब यह बात मेरी समझ में नहीं आई थी तब शब्द मेरे नाम लिखा था तब मैं क्या किया करता था ? दाता से प्रेम करता, आरती उतारता, सिंहासन बनाता आदि-आदि । उस समय दातादयाल इशारा करते कि क्यों दीवाना हो गया है, मगर मेरी दीवानगी जाती नहीं थी । कुछ अज्ञानता और कुछ वाणियों के जाल का प्रभाव था । मगर सत्संगियों के अनुभवों ने मेरे इस अज्ञान को दूर किया । कहा है—

गुरु बतावे साध को, साध कहे गुरु पूज ।

अर्श पर्श के मेल से, बूझी बूझी अबूझ ॥

शिष्य नवे है गुरु को, यह जाने सब कोय ।

गुरु नवे जब शिष्य को, बिरला जाने सोय ॥

मैं आज से नहीं सन् 1919 ई. से इस भेद या रहस्य को जानता हूं । मैं दातादयाल की बड़ी भारी मानसिक भक्ति करता था । दाता का रूप बनाता, मुकट बनाता, माला पहिनाता आदि-आदि मगर वह क्या निकला ? माया !



यह मन के ही विचार थे । मैं माया के जाल में फंसा हुआ था । स्वामी जी ने भी कहा है—

भक्त उपासक योगी ज्ञानी, इन सब चक्कर खाया ।

मैं भी इसी तरह चक्कर खाता रहा मगर अब मैं इससे निकल गया हूँ । अब मैं क्या करता हूँ ? मैं अब मन के चक्र से ऊपर रहता हूँ । वह मन का चक्र था रूप, रंग और रेखा । जहाँ तक इनका सम्बन्ध है उनके साथ • उनको सन्त मानकर अपनी तवज्जह *Attention*, को जोड़ना, साथ लगे रहना, उनमें आनन्द लेना, यह सब काल और माया का चक्र है ।

तुम पूछोगे फिर मैं कहाँ रहता हूँ । अब मेरा आपा (*Self*) निजस्वरूप (*Self*) के साथ रहता है । राधा-स्वामी दयाल मेरा आपा (*Self*) है ।

यह माया कठिन जाल है । इस चक्र से निकलने की अधिकारो पदार्थों से आसक्ति रखने वाली दुनियाँ नहीं है । इसका अधिकार उनको है जो अशान्त और दुःखी हैं या जो आवागमन और काल माया के चक्र से बचना चाहते हैं ।

जब तवज्जह (सुरत दूसरे पदार्थों के साथ लगी है तो वह काल माया के चक्र से न निकल सकेगी । अभ्यास में मन संकल्प उठता रहता है । उस समय जो रूप बनते हैं हम उनसे आसक्ति (*Attach*) करते हैं । अनेक रूप बनाते हैं— गुरु का, राम का, कृष्ण का, नानक का आदि-आदि । यों समझो कि जिस-जिस से सम्बन्ध जोड़

रक्खा है उसी भाव के अन्तरगत रूप बनते रहते हैं। वह रूप बनाता है मन। हम मन से रूप बनाकर आप फंसे रहते हैं। चूंकि हमको सार ज्ञान की प्राप्ति नहीं हुई है इससे उसे भिन्न या दूसरा समझते हैं। फिर आवागमन से कैसे बच सकते हैं ?

अतः राधास्वामी दयाल, कबीर तथा ऋषियों को शिक्षा यह है कि अपने आप (Self) को अपने निजस्वरूप (Self) से लगाना और कल्पनाओं से जो रूप आप बनाते हैं उनसे अलग होना है वरना बचाव की कोई सूरत नहीं है। यह 84 का चक्र है।

इसलिए मैं राधास्वामी दयाल या सन्तमत की इज्जत करता हूं क्योंकि मैं इनकी कृपा से काल माया के चक्र से निकल गया। अभी इस चोले में हूं। क्यों हूं ? जगत कल्याण के काम करने के लिए।

मैं इस काल माया के चक्र से कैसे निकला ? यह कि मुझे ज्ञान हो गया कि असलियत क्या है ? जिन लोगों ने मुझ पर विश्वास किया अथवा जिन्होंने मुझे गुरु माना, उनके अनुभवों से मेरे अज्ञान का पर्दा हट गया। आज मैं दातादयाल के रूप में आपके दर्शन करके अपने का कृतार्थ कर रहा हूं। महात्माओं ने सच्चाई को इन शब्दों में नहीं खोला जिस तरह कि मैंने खोला है।

मैंने इस रहस्य या भेद को क्यों खोला ? क्योंकि मैं मूर्ख था, रहस्य समझ में नहीं आता था। समझता था शायद



धरे भी मेरी तरह ऐसे हो होंगे। दातादयाल ने इसी बात को समझाने के लिए अपने अन्तिम समय में एक बार सत्संग में कहा कि (यहां के सत्संगियों में) बेबकूफ चुनो। उसमें सबसे पहला नाम नन्दू भाई जी का था। ऐसा उन्होंने क्यों कहा? क्योंकि बेबकूफ उसे कहते हैं जिसको समझ न हो, ज्ञान न हो। मनुष्य अपनी मुक्ति दिलाने वाला किसी दूसरे को समझता है। वास्तव में मुक्ति दाता है समझ या ज्ञान।

आज बसन्त का दिन है जिस दिन स्वामी जी ने सत्संग का क्रम चालू किया था। आज ही के दिन मैं कहता हूं कि राधास्वामी मत को भावी सन्तान याद करेगी। यही मत है जो आज के समय में मुक्ति दिला सकता है।

मैं राधास्वामी मत को इस कारण से सच्चा मानता हूं कि वह केवल पूर्ण पुरुष की भक्ति बताता है। वह भक्ति क्या है? सत्संग में बैठकर उस की बात को ध्यान से सुनना है। यह ही भक्ति है। मत्थे टेकना, फूल चढ़ाना, भेंट देना आदि यह बच्चों जैसे अज्ञानियों को है मगर है वह आवश्यक। यह हमारी रीति है, प्रथा है। इसलिए आज बसन्त के दिन मैं सतपुरुष राधास्वामी दयाल की बन्दना करता हूं।

(क्रमशः)



# परमसन्त सद्गुरु हिज् होलीनेस हजूर मानव दयाल जी महाराज की संक्षिप्त जीवनी

( उनके जन्म-दिवस 5 सितम्बर के उपलक्ष्य में )

लेखक :

आचार्य शब्दानन्द जी  
मानवता मन्दिर, होशियारपुर

परमसन्त सद्गुरु हजूर मानव दयाल डा. ईश्वर चन्द्र शर्मा जी महाराज का जन्म अखण्ड भारत के अविभाजित पञ्जाब प्रान्त में जिला मुल्तान में 5 सितम्बर 1921 ई. को एक अत्यन्त सुसंस्कृत, सुशिक्षित और धर्मपरायण आध्यात्मिक घराने में हुआ था। इनके पिता महाभाग श्री बलदेव कृष्ण जो महाराज अत्यन्त भेधावी और तीव्र बुद्धि के पुरुष थे। विद्यार्थी जीवन में वे सदा अपनी कक्षा में प्रथम स्थान लाते रहे। भगवद्गीता व बाइबिल का उन्होंने बचपन में ही गहन अध्ययन किया था तथा उनके अनेक अध्याय उन्हें कण्ठस्थ थे। गणित और अंग्रेजी के वे महान् विद्वान् थे।

मैट्रिक पास करने के बाद ब्रिटिश सरकार ने उन्हें उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिए विलायत भेजने का फैसला



किया, किन्तु वे अपने माता जी के आशीर्वाद के बिना विलायत नहीं जा सकते थे। वे अपनी माता जी को बहुत ही प्यार व सम्मान देते थे। उनकी धर्मपरायण माता अपने लाडले लाल को विलायत जाने की अनुमति कदापि नहीं दे सकती थी क्योंकि उन्हें विश्वास था कि विलायत जाकर लोग क्रिस्तान बन जाते हैं। अतः उन्होंने विलायत जाने की बात छिपा कर, कुछ समय के लिए बम्बई जाने का बहाना किया। किन्तु मां को पता लग गया कि बलदेव कृष्ण विलायत जा रहे हैं। आंखों से आंसू बहाते हुए मां बोली— “बलदेव तू मुझ से झूठ बोल रहा है ! तू बम्बई नहीं, विलायत जा रहा है। मेरे बेटे ! उच्च कुल का ब्राह्मण होकर विलायत जाते तुझे शर्म नहीं आती”। और वे फूट-फूट कर रो पड़ीं। दयालु-हृदय और मातृ-भक्त बलदेव कृष्ण जी अपनी ममतामयी मां की आंखों में भला आंसू कब देख सकते थे। उसी समय विलायत जाने का विचार सदा के लिए त्याग दिया और अपने ही स्कूल में अध्यापक हो गये।

ईश्वर चन्द्र शर्मा जी महाराज अपने माता-पिता के इकलौते पुत्र होने के नाते बड़े ही लाड़-प्यार से पाले गये। इनका पाञ्च छोटी बहनें थी। इनका बचपन का नाम चन्द्रशेखर था, किन्तु इनके पिता ने इनकी प्रतिभा को देखते हुए, बंगाल के अद्वितीय विद्वान् ईश्वर चन्द्र विद्यासागर के नाम पर, इनका भी यही नाम रख दिया। आगे चलकर इन्होंने अपने नाम से विद्यासागर शब्द हटाकर

केवल ईश्वर चन्द्र ही रखा। इनके पिता जी जहाँ भी जाते, प्रायः इन्हें भी अपने साथ ले जाया करते। सुयोग से एक बार मुल्तान नगर में महामना पण्डित मदन मोहन मालवोय काशी से आये और नगर सेठ राय बहादुर हरिचन्द मेहरा की कोठी में ठहरे। उनकी पौत्री के शिक्षक होने के नाते, वह श्री बलदेव कृष्ण जी महाराज का बड़ा सम्मान करते थे। अतः महामना के आने पर राय बहादुर ने इन्हें भी अपनी कोठी पर बुला लिया। बलदेव कृष्ण जी बालक ईश्वर चन्द्र को भी अपने साथ ले गये और महामना से मिलाया। महामना के पास बिठा कर पिता जी तो काम में व्यस्त हो गए। महामना ने बालक ईश्वर चन्द्र से बड़े प्यार से पूछा—“प्यारे बच्चे ! क्या तुम्हें गायत्री मन्त्र आता है” ? यद्यपि कि गायत्री मन्त्र किसी ने इन्हें दिया नहीं था पर सहज मेधा से बालक ईश्वर चन्द्र ने गायत्री मन्त्र गाकर सुना दिया। महामना सुनकर बहुत ही प्रसन्न हुए और प्याग से इनका मस्तक चूम कर पाञ्च रुपए का नया चमकता नोट अपनी जेब में निकाल कर इनको देते हुए सिर पर हाथ रख कर आशीर्वाद दिया। यह एक प्रकार से बालक ईश्वर चन्द्र को महामना पण्डित मदन मोहन मालवोय जी की आरम्भिक दीक्षा थी।

आगे चलकर उच्च शिक्षा के दौरान में पण्डित ईश्वर चन्द्र शर्मा जी महाराज को पी-एच. डी. के अनुसन्धान-क्रम में बौद्ध, जैन, यहूदी, ईसाई, इस्लाम तथा सिक्ख



आदि धर्मों के तुलनात्मक अध्ययन का सुअवसर मिला । संस्कृत में एम. ए. की शिक्षा प्राप्त करने के दौरान इन्होंने वेदों, उपनिषदों, ब्राह्मणों, भगवद्गीता एवं वेदान्त आदि का मौलिक अध्ययन किया । इसी क्रम में आप अनेक तत्कालीन विद्वानों, दार्शनिकों तथा धर्म-गुरुओं के निकट सम्पर्क में आये । यह सब कुछ मानो प्रकृति माता, उन्हें परमसन्त परमदयाल पण्डित फकीर चन्द्र जी महाराज से मिलाने की पृष्ठभूमि तैयार कर रही थी । विश्व के सभी मुख्य धर्मों का गहन अध्ययन और समकालीन धर्म-गुरुओं से व्यक्तिगत परामर्श के फलस्वरूप, आपके मन में किञ्चित्-मात्र भी सन्देह नहीं रहा कि सभी धर्म एक ही परमेश्वर को पाने के विभिन्न मार्ग और साधन मात्र हैं और परमेश्वर एक है । यह वैज्ञानिक और सनातन सत्य हैं ।

डाक्टर ईश्वर चन्द्र शर्मा साहिब बहादुर को बचपन से ही ईश्वर के साक्षात् दर्शन करने की इच्छा रही है । यही कारण है कि विद्यार्थी जीवन में भी आपका सम्पर्क लखनऊ के धार्मिक अध्यापकों से होता रहा है । पाञ्च वर्ष की आयु से ही आप आध्यात्मिक साधना के मार्ग पर चलते आ रहे हैं इसलिए आपके विचार केवल किताबी या बौद्धिक स्तर तक ही सीमित नहीं रहे, बल्कि सच्ची भक्ति-भाव-रस-सिंचित रहे हैं ।

चौदह वर्ष की अल्प आयु में ही आपने बहुत ही अच्छे अंकों से मैट्रिक पास किया । जय आपने मुल्तान के

एमरसन गवर्नमेंट कालिज में दाखिला लिया, उस समय बड़े घरानों के लड़के इञ्जिनियरिंग या डाक्टरी पढ़ने के विचार से सार्इस में दाखिला लेते थे, आर्ट्स में नहीं। पर आप कभी भी इन प्रलोभन में नहीं आये। आपने संस्कृत, दर्शन-शास्त्र, इतिहास और अंग्रेजी के विषयों का अध्ययन किया। संयोग से आपके सभी प्रोफेसर महान् विद्वान् और धार्मिक स्वभाव के थे जिनसे आपको उत्कृष्ट ज्ञान तथा सत्य धर्म की शिक्षा मिली।

आपके कालेज के वाइस प्रिंसिपल श्री सदानन्द जी के उत्तम आचार-विचार का गहरा असर आप पर पड़ा। वे महात्मा गुरुदत्त जी के सुपुत्र और स्वामी सियाराम जी के शिष्य तथा योगाभ्यासी थे। कालेज का सबसे अधिक प्रतिभावान छात्र और उत्तम वक्ता होने के कारण सदानन्द जी आपको सब छात्रों से अधिक मानते थे।

दर्शन-शास्त्र के प्रोफेसर रूबन दास की योग्यता का भी इन पर गहरा प्रभाव पड़ा। वे प्रोफेसर होने के साथ-साथ एक ईसाई पादरी भी थे जो प्रायः इन्हें अपने साथ मेथोडिस्ट चर्च में भी ले जाया करते थे। ईसाई धर्म के विषय में आपने उनसे बहुत कुछ ज्ञान हासिल किया। लोगों में यहां तक गलतफहमी हो गई थी कि प्रोफेसर रूबन दास ईश्वर चन्द्र शर्मा को एक दिन अवश्य ही ईसाई बना देंगे। किन्तु ऐसा कोई विचार शर्मा जी के मन में नहीं था।



इसी प्रकार दर्शन-शास्त्र के उच्च-कोटि के विद्वान् प्रोफेसर ताजमोहम्मद साहिब की भी शर्मा जी पर विशेष कृपा थी। वे इस्लाम धर्म के विद्वान् होने के अतिरिक्त उर्दू के महाकवि भी थे। इस्लाम धर्म के बारे में आपने उनसे बहुत कुछ ज्ञान हासिल किया।

अपने संस्कृत के प्रोफेसर पण्डित गणपति राय से आपने भगवद्गीता और उपनिषदों की उत्कृष्ट शिक्षा ग्रहण की, तथा अंग्रेजी के प्रोफेसर सरदार गुरुचरण सिंह जी से सिक्ख धर्म का अच्छा ज्ञान प्राप्त किया। लाहौर के ओरिएण्टल कॉलेज के संस्कृत के प्रसिद्ध विद्वान् डाक्टर लक्ष्मण स्वरूप से आपने वैदिक संस्कृत व्याकरण की शिक्षा ली तथा महाविद्वान् डाक्टर सूर्यकान्त जी से वेदों का अध्ययन किया। प्रोफेसर जगन्नाथ अग्रवाल ने आपको ब्राह्मी लिपि और शिलालेखों का ज्ञान कराया। सुविख्यात डाक्टर रघुवीर ने आपको संस्कृत भाषा और साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन कराया। पश्चिमीय दर्शन के विख्यात विद्वान् एवं शिक्षा-शास्त्री प्रोफेसर जी. मो. चैंटर्जी की आप पर विशेष कृपा थी जिनके कारण पश्चिमीय दर्शन में आपको विशेष ज्ञान व दिलचस्पी हो गई।

आपने डाक्टर राधाकृष्णन के परमशिष्य विश्व-विख्यात प्रोफेसर पी. टी. राजू के निरीक्षकत्व में पी-एच. डी. की डिग्री के लिए रिसर्च की। इसी क्रम में आगे चलकर डाक्टर राधाकृष्णन से आपका निकट का सम्पर्क हो गया और उनका विशेष कृपा आप पर सदा बनो रही।

भारत के राष्ट्रपति की हैसियत में, अमेरिका के राष्ट्रपति जाहन कैनेडी के निमन्त्रण पर, डाक्टर राधाकृष्णन जब अमेरिका गये, तब उन्होंने तीन दिन तक आपको अपने साथ रखा। उसी दौरान आपको डाक्टर राधाकृष्णन जी के महान् मानववादी एवं ईश्वर-भक्त के रूप की शलक और व्यक्तित्व का नज़दीक से दर्शन करने का अवसर मिला।

अपने पी-एच. डी. के रिसर्च के क्रम में आपका सम्पर्क तेरापन्थी जैन सम्प्रदाय के महान् आचार्य तुलसी मुनि, जैन विद्वान् पण्डित चैनसुख दास, विश्व धर्म सम्मेलन प्रवर्तक मुनि सुशील कुमार, जैन मुनि जिनविजय महाराज और डाक्टर ए. एन. उपाध्याय से हुआ। सीभागवश 1955 में आपका सम्पर्क जयपुर के महापण्डित मोती लाल जी शास्त्री से हुआ जो हिन्दू संस्कृति के प्रकाण्ड विद्वान् थे और जिन्होंने वेदों, उपनिषदों एवं अगवद्गोता आदि के वैज्ञानिक पहलुओं पर एक लाख पन्चीस हजार पृष्ठों का साहित्य रच डाला। उनकी अद्भुत विद्वत्ता से प्रभावित होकर भारत-रत्न, राष्ट्रपति डाक्टर राजेन्द्र प्रसाद जी ने उन्हें हिन्दु संस्कृति के निगूढ़तम विषयों पर पांच भाषण देने के लिए राष्ट्रपति भवन में पांच दिन के लिए आमन्त्रित किया जिन्हे सुनने के लिए भारत के महानतम विद्वानों, दार्शनिकों और साहित्यकारों को एकत्र किया गया था। सभी श्रोताओं ने उन भाषणों की मुक्त-कण्ठ से प्रशंसा की और हिन्दु धर्म की महानता को



समझा। उन पाँचों भाषणों को राष्ट्रपति जी ने अपनी भूमिका सहित पुस्तक-रूप में प्रकाशित करवाया जो राष्ट्र के लिए एक अमूल्य निधि है।

पण्डित मोती लाल जी शास्त्री की डाक्टर साहिब पर विशेष कृपा थी जिनके जयपुर स्थित 'मानव आश्रम' में इन्होंने लगातार पाँच ग्रीष्म-ऋतु व्यतीत कर, उनसे वेदों का अपार ज्ञान प्राप्त किया। पण्डित मोती लाल जी अत्यन्त दयालु हृदय, मानववादी कर्मकाण्डी थे। एक दिन जब उन्हें पता चला कि डाक्टर साहिब का विवाह एक अरोड़ा कन्या से हुआ है तो शास्त्री जी ने डाक्टर साहिब को फटकार लगाई— “ईश्वर चन्द्र ! एक उच्च कुल का ब्राह्मण होकर तूने अब्रह्माणो कन्या से विवाह क्यों किया। तुझ दुबारा एक ब्राह्मणी से विवाह करना होगा”। गुरु-भक्त डाक्टर साहिब चुप रहे। तब दयालु शास्त्री जी अपनी अनोखी मनमोहक मुस्कराहट से बोले— “ईश्वर चन्द्र ! मैं दरअसल परिहास कर रहा था। भाग्य वास्तव में एक सच्ची ब्राह्मणी है, उसमें ब्राह्मण के सभी लक्षण विद्यमान हैं। आज से वह मेरी बेटी है”। उसी समय से वह भाग्य माता जी को या तो बेटी कहकर बुलाते या शर्मिणी। शास्त्री जी के उस अनोखे प्यार और सहज स्नेह को स्मरण कर आज भी भाग्य माता जी की आँखें डबडबा जाती हैं।

शास्त्री जी केवल दो घण्टे ही सोते थे। वे 18 घण्टे लिखते, दो घण्टे पूजा-पाठ करते और दो घण्टे अपने

परिवार के साथ बातें करते। इस घनघोर परिश्रम के कारण ही सन् 1960 ई. में 52 वर्ष की आयु में ही उन्हें शरीर छोड़ना पड़ा। उनके शरीर-त्याग के बाद डाक्टर साहिब को उनसे और अधिक प्रेरणा मिली। डाक्टर साहिब ने उनके विचारों पर आधारित 'Ethical Philosophies of India' नामक जगत्-प्रसिद्ध पुस्तक लिखी जो इंग्लैण्ड के विश्वविख्यात प्रकाशक जार्ज एलन एण्ड अनविन और अमेरिका के प्रकाशक जानसन पब्लिशिंग कम्पनी, लिंकन, नेबरास्का द्वारा एक साथ प्रकाशित की गई। पश्चिमीय विद्वानों ने इस पुस्तक को इतना पसन्द किया कि यह विश्व के प्रमुख विश्वविद्यालयों और कालेजों में पढ़ाई जाने लगी। इस पुस्तक की मांग इतनी बढ़ी कि विश्वविख्यात प्रकाशक हारपर एण्ड रो, न्यूयार्क ने इसको पेपरबक में प्रकाशित किया। इस पुस्तक के प्रकाशन के बाद डाक्टर साहिब की ख्याति इतनी बढ़ी कि अमेरिका के कानेज और यूनिवर्सिटियों में पढ़ाने के लिए आपको 15 बार अमेरिका में बुलाया गया।

इन तथ्यों से यह स्पष्ट हो जाता है कि डाक्टर ईश्वर चन्द्र शर्मा साहिब बहादुर का परमदयाल फकीर चन्द जी महाराज से मिलना और उनके निकटतम संपर्क में आना कोई अचानक घटना नहीं थी। प्रकृति-माता मानो डाक्टर साहिब बहादुर को शास्त्री जी के द्वारा तत्त्व-ज्ञान प्राप्त कराकर, उन्हें परम दयाल फकीर चन्द जी महाराज से मिलाने, तथा उनका परम शिष्य बनने के लिए तैयार



कर रही थी। पांच वर्षों में शास्त्री जी ने वेदों, उपनिषदों तथा अन्य हिन्दु ग्रन्थों की अनन्त गूढ़ तत्व-ज्ञान की जो बातें डाक्टर साहिब बहादुर को बताई, वह सब कुछ परम दयाल जी महाराज ने, बगैर ग्रन्थों को पढ़े, अपने आन्तरिक अनुभव के आधार पर बताई। लेशमात्र भी तो अन्तर नहीं है उनमें। इससे यह सिद्ध होता है कि सार सच्चाई एक है।

डाक्टर ईश्वर चन्द्र शर्मा साहिब बहादुर यद्यपि बचपन से ही सभी धर्मों की एकता में विश्वास करते थे, तथापि, वह मानते हैं कि उपर्युक्त सभी महापुरुषों के सम्पर्क में आना उनके लिए वरदान सिद्ध हुआ। वे पूर्ण-रूप में मानववादी बन गये। मानव आश्रम, जयपुर में उनका निवास मानो मानवता मन्दिर, होशियारपुर के लिए उनका पथ प्रशस्त कर रहा था। परमेश्वर की कृपा से उन्हें जीवन के सभी सुख प्राप्त थे—विदुषी पत्नी, दो सुपुत्र-रत्न, भरा-पूरा सुखी परिवार, धन-सम्पदा, गुरु-पद, यश-सम्मान सभी कुछ। महान् शिक्षक, लेखक दार्शनिक होते हुए भी मानो हर पल कोई कमी उन्हें महसूस होती रहती थी। वे बौद्धिक स्तर से ऊपर उठकर परात्पर ब्रह्म-तत्व का साक्षात्कार करना चाहते थे जिसके निमित्त साधना में उनका समय और तल्लीनता बढ़ता ही गई।

1959 के अन्त में एक रात आपने एक स्वप्न देखा जिसमें एक अत्यन्त सुन्दर दयालु, वीतराग, सफेद दाढ़ी वाले महापुरुष के दर्शन हुए। उनकी मुस्कराहट से दसों,

दिशाएं दीप्तिमान हो रही थीं। महापुरुष ने आपके सिर पर बड़े ही प्यार से हाथ फेरते हुए कहा— “नवयुवक, तुम उदास क्यों हो ? क्या तुम ईश्वर के दर्शन करना चाहते हो ? अच्छा, तुम्हें इसी जन्म में ईश्वर के दर्शन होंगे और तुम्हें सन्देह से मुक्ति मिलेगी” । वे महापुरुष आपके साथ-साथ देश-विदेश में यात्रा करते और लोगों से आपका परिचय कराते। देश-विदेश के लोग उनके भाषणों को बहुत ही पसन्द करते और उन्हें भगवान की तरह मानते थे ।

कुछ काल बीतने पर आप इस स्वप्न को एक प्रकार से भूल से गये । 1962 में आपको पहिलो बार अमेरिका में पढ़ाने के लिए बुलाया गया और आपकी यह पहिली विदेश यात्रा बहुत ही सफल रही । एक साल बाद 1963 में जब आप अमेरिका से लौटे तो दिल्ली में अपनी बहिन वेद शर्मा के घर एक दिन के लिए रुके । उसी दिन आपके बहनोई डाक्टर रमेश चन्द्र शर्मा ने आप से कहा— “चन्द्र ! एक बहुत बड़े सन्त परम दयाल पण्डित फकीर चन्द जी महाराज दिल्ली आये हुए हैं । मैं उनके सत्संग में जा रहा हूं । क्या तुम और भाग्य उस सत्संग में चलोगे ?” पर आप लोगों ने न तो परम दयाल जी का नाम ही कभी सुना था, और न ही उनके विषय में कभी कुछ पढ़ा था । अतः उनके सत्संग में आपकी कोई खास रुचि नहीं थी । फिर अमेरिका की लम्बा यात्रा से लौटने की थकान भी थी जो आपको रोक रही थी । फिर भी न जाने कौन सी अदृश्य



शक्ति आपको इन महापुरुष के दर्शन करने के लिए खींच रही थी। अतः आप इन्कार नहीं कर सके और आप दोनों ही रमेश जी के साथ हो लिए।

आप तीनों जब उस हिन्दु महासभा भवन में पहुंचे, जहां लगभग दो हजार श्रोता परम दयाल जी महाराज के सत्संग की धारा में स्नान कर रहे थे, और ज्यों ही आपकी दृष्टि स्टेज पर आसीन परम दयाल जी महाराज पर पड़ी, तो आप भौचक्के से रह गये। फौरन भाग्य माता जी से बोले— “भाग्य ! यह तो वही महापुरुष हैं जिन्होंने मुझे 1959 में स्वप्न में दर्शन दिये थे और मैंने उस स्वप्न की बात दूसरे दिन तुम्हें बताई भी थी”। आप परम दयाल जी महाराज की दिव्य मूर्ति को एकटक होकर देखते रहे। रमेश जी ने आपको आगे बढ़ने को कहा। जब आप दोनों एक स्थान पर बैठने हो वाले थे कि उसी समय परम दयाल जी महाराज ने आपको ओर देखा और संकेत से स्टेज की ओर बुलाया। जब आप स्टेज के पास पहुंचे तो उन्होंने आपको स्टेज के ऊपर आ जाने को कहा। स्टेज पर पहुंच कर आपने जब उनके चरण छुये तो आपके शरीर में मानो बिजली की करण्ट-सी दौड़ गई। आप रोमाञ्चित हो उठे। परम दयाल जी ने अपने गले में पड़ी हुई फूलों की मालायें उतार कर आपके गले में डाल दीं और बड़े ही प्यार से आपके सिर पर हाथ फेरते हुए कहा— “तो तुम हो शर्मा दि ग्रेट ! अच्छा मेरे पास बैठ जाओ”।

डाक्टर शर्मा साहिब बहादुर उनके मुख से अपना नाम सुनकर और भी ज्यादा हैरान रह गए। सोचने लगे कि यह महापुरुष मेरा नाम कैसे जानते हैं ! और फिर उन्होंने बह कैसे कहा— “तो तुम हो शर्मा दि ग्रेट !” आज से पहिले कभी इनसे मिले भी नहीं, फिर यह मुझे कैसे जानते हैं ? यह सब रहस्य की बातें आप सुलभा नहीं पा रहे थे। तभी यह विचार कर, कि सत्पुरुष तो त्रिकाल-दर्शा होते हैं, परम दयाल जी महाराज में आपकी अपार श्रद्धा हो गई और उनके सत्पुरुष होने में आपको ज़रा भी शक नहीं रहा। आपको उसी समय परमहंस रामकृष्ण और युवक नरेन्द्र (जो बाद में विवेकानन्द के नाम से प्रसिद्ध हुए), को पहिली मुलाकात की ऐतिहासिक घटना याद आ गई और आप बारम्बार मन ही मन परम दयाल जी महाराज को नमस्कार करने लगे।

इस घटना के बाद, परम दयाल जी महाराज के आशीर्वाद से, आपको हर वर्ष अमेरिका में पढ़ाने और प्रवचन के लिए बुलाया जाने लगा। 1967 में जब आपको एक साल के लिए अमेरिका बुलाया गया, तो आप परम दयाल जी महाराज से मिलने गए। उन्होंने आपको कहा— “डाक्टर शर्मा ! तुम अमेरिका में पढ़ाने एक साल के लिए नहीं जा रहे हो। तुम्हें वहां तीन साल रहकर पढ़ाना होगा”। सचमुच ही उन्हें अमेरिका में तीन साल पढ़ाना पड़ा। 1968 में परम दयाल जी महाराज ने बर्जीनिया में आपको एक बहुत ही प्यारा प्रेरणादायक पत्र लिखा—



“डाक्टर आई. सी. प्यारे ! तुम्हारा अमेरिका जाने का मकसद सिर्फ कालेज और यूनिवर्सिटियों में पढ़ाने तक ही सीमित नहीं है । सुना है, पश्चिम के लाग बड़े अच्छे जिज्ञासु हैं । कुदरत ने तुम्हें उन लोगों के साथ लगाया है । सत्य एक है, परमसत्ता एक है और हम सब उसी परमसत्ता से आए हैं । सम्पूर्ण मानव जाति एक है । तुम जब तक वहां हो, तुम्हारा फर्ज है कि तुम वहां के लोगों को आध्यात्मिक ज्ञान दो, उनके मानसिक दुःखों को दूर करो । सच्चाई को संसार भर के लोगों में फैलाने के लिए ही कुदरत ने तुम्हें विदेशों में जाने का मौका दिया है और तुम्हें मेरे साथ भी लगा दिया है । इस सच्चाई को फैलाना बहुत जरूरी है और इसके लिए केवल मैं और तुम ही नहीं, बल्कि दुनियां के बहुत से और लोग भी मालिक की मर्जी से घसीटे जा रहे हैं । दुनियां की शान्ति के लिए दो महान् शक्तियों अमेरिका और रूस के वातावरण को बदलना बहुत जरूरी है । यदि ऐसा नहीं किया गया, तो दुनियां की बर्बादी को रोका नहीं जा सकता । सौभाग्यवश अमेरिका निवासी भगवान् में आस्था रखने वाले और जिज्ञासु हैं । उनको सच्चाई समझाने में कोई मुश्किल नहीं होगी । तुम उनको भलाई के लिए, उनके तलाक कम करने के लिए और उन्हें सच्चा ज्ञान देने के लिए अपना अधिक-से-अधिक समय लगाओ । ऐसा करने के लिए वहां के लोगों को अपना धर्म मत या विश्वास बदलने की जरूरत नहीं । उन्हें तो मानवता धर्म के बारे

में बताना है, जो कि सबका धर्म है। तुम्हें यह सब काम करने के लिए न तो नौकरी छोड़ने की ज़रूरत है और न सन्यास लेने की। तुम्हारी एक सुन्दर पढ़ी-लिखी पत्नी है, और दो प्यारे-प्यारे बच्चे हैं। उनके प्रति जो तुम्हारी ज़िम्मेदारी है, उसको निभाना तुम्हारा धर्म है। तुम एक अच्छे पति, अच्छे पिता बनो, गृहस्थी के सुख भोगो, लेकिन अपने परम लक्ष्य को कभी मत भूलो, और अपना अधिक से अधिक समय साधना तथा लोक-कल्याण में लगाओ। तुम्हारी पत्नी भाग्य पढ़ी-लिखी और समझदार है। भगवान् में उसकी आस्था है। उम्मीद है वह तुम्हारे मिशन में तुम्हें मदद देगी। उसको कहना कि उसका कल्याण तभी होगा जब वह भी साधना के इस रास्ते को अपनायेगी। मेरा आशीर्वाद सदा तुम्हारे साथ रहेगा। मालिक तुम्हें सुखी रखे। अब की बार जब तुम वापिस आओगे तो मैं तुम्हारी पूरी तरह से जांच करूंगा। तुम्हें दुनियां में महान् काम करने हैं”।

परम दयालु जी के इस प्रेरणाभरे प्यारे पत्र को हज़ूर ने कई बार पढ़ा और आनन्दित हुए। कुछ ही दिन बाद अमेरिका को अन्तर्राष्ट्रीय संस्था 'एसोसियेशन फ़ार रिसर्च एण्ड इनलाइटनमेंट' के मुखिया श्री ह्यूलिन केसी ने अपनी संस्था के हेडक्वार्टर, बर्जीनिया बीच में आपको बुलाया। श्री ह्यूलिन केसी के पिता एडगर केसी की 1945 में मृत्यु हो गई थी जो पश्चिमीय जगत् के एक सिद्धयोगी माने जाते हैं। उन्होंने अपने जीवन में हजारों चमत्कार दिखाये



और सैकड़ों भविष्यवाणियां कीं जो सत्य सिद्ध हो रही हैं। बीसवीं सदी के मध्य में भारत के आजाद होने की भी भविष्यवाणी उन्होंने की थी।

दरअसल ह्यूलिन केसी को हजूर की नायाब पुस्तक 'Ethical Philosophies of India' को पढ़ने का मौका मिला था, अतः हजूर में उनकी रुचि हो गई। उन्होंने हजूर से लिचबर्ग कालेज, बर्जीनिया में, जहां हजूर उस समय दर्शन-शास्त्र पढ़ा रहे थे, टेलीफोन से बात की और हजूर को अपनी संस्था ए. आर. ई. में भाषण देने के लिए आमन्त्रित किया। ह्यूलिन केसी एडगर केसी के सुयोग्य पुत्र और एक मिलनसार सच्चे महापुरुष है। विशेषकर उन्होंने और सामान्यतः अन्य सभी श्रोताओं ने पुनर्जन्म और कर्म के सिद्धान्त पर दिये गये हजूर के भाषणों को बहुत ही पसन्द किया और हजूर को बारम्बार अपनी संस्था में भाषण देने के लिए बुलाया। हजूर अपने भाषणों में फकीर बाबा का जिक्र अवश्य ही करते।

1969 में ह्यूलिन केसी ने हजूर से फोन पर पूछा—  
“डाक्टर शर्मा! क्या हम भारत जाकर फकीर बाबा से मिल सकते हैं?” हजूर ने उन्हें सकारात्मक उत्तर दिया और परमदयाल जी महाराज को एक पत्र लिखा कि ह्यूलिन केसी अपने दल के साथ भारत आ रहे हैं और आप से मिलना चाहते हैं। क्या वे उन लोगों की दिल्ली में दर्शन दे सकेंगे? फकीर बाबा ने तुरन्त उत्तर दिया कि वे उनसे दिल्ली में मिल सकते हैं। सीभाग्यवश जिन दिना

ए. आर. ई. का दल दिल्ली पहुंचा, उसी समय परमदयाल महाराज जी भी बसन्त दौरा समाप्त कर दिल्ली पहुंचे । दिल्ली के मेडन होटल में ह्यूलिन केसी ने अपने दल सहित परम दयाल जी महाराज (फकीर बाबा) के दर्शन किए और सत्संग लाभ उठाया । बाद में वह सत्संग 'A word to Americans' नाम की छोटी सी पुस्तक के रूप में छप गया ।

अमेरिका वापिस पहुंच कर ह्यूलिन केसी ने फकीर बाबा की बहुत ही प्रशंसा की और बताया कि उनके दल के सभी लोग फकीर बाबा की सच्चाई, सरलता, पवित्रता और उच्च विचारों से बहुत ही प्रभावित हुए । ह्यूलिन केसी तथा अन्य कई अमेरिकी मित्रों ने हजूर से फकीर बाबा को अमेरिका बुलाने के लिए आग्रह किया । इसी बीच हजूर लम्बी छुट्टी पर भारत वापिस आ गए और कई बार दिल्ली तथा होशियारपुर में परम दयाल जी महाराज के सत्संग का जी भर कर लाभ उठाया । आपकी उनसे घण्टों तक प्राईवेट बातें होतीं । जब हजूर इस बार अमेरिका जाने से पूर्व परम दयाल जी से मिलने गये तो उन्होंने बड़े प्यार से आशीर्वाद देते हुए कहा—“ईश्वर चन्द्र ! इस बार को तुम्हारी अमेरिका की यात्रा का खास मकसद है” ।

जून 1971 में हजूर भाग्य माना जी के साथ फिर अमेरिका गये । शीघ्र ही अपने दोनों सुपुत्रों अरुण और प्रियदर्शी को मिलकर जो अमेरिका में ही कई वर्षों से पढ़



रहे थे बहुत ही प्रसन्न हुए। बच्चों की इच्छा थी कि हजूर स्थायी रूप से अमेरिका में ही आ जायें। किन्तु हजूर को अपनी मातृभूमि भारत को छोड़ना स्वीकार नहीं था। इसलिए बच्चों की इच्छा पूरी नहीं हुई।

इस बार वर्जीनिया के जिस शहर में हजूर पढ़ा रहे थे. वह ए. आर. ई. संस्था वर्जीनिया बीच से केवल 45 मील दूर थी। अतः हजूर को बार-बार भाषण देने के लिए बुलाया जाने लगा। संस्था के अनेक सदस्य डॉक्टरों, प्रोफेसरों, मनोवैज्ञानिकों से हजूर की स्थायी रूप से मंत्री हो गई। इन अमेरिकी मित्रों के निस्वार्थ प्रेम और श्रद्धाभाव के कारण वे हजूर को सम्बन्धियों से भी अधिक प्रिय हो गए।

वर्जीनिया बीच में और भी बहुत सी संस्थायें हैं जिनका उद्देश्य रूहानी तरक्की करना है। ऐसी ही एक संस्था है योग सेंटर, जिसके सञ्चालक एक बहुत ही गुणवान् युवक जोसेफ फेंटन हजूर के मित्रों में हैं। हिन्दु संस्कृति, धर्म और योग-साधना में जोसेफ की बड़ी रुचि है और वे स्वयं एक अच्छे साधक हैं। उन्होंने हजूर को कई बार योग सेंटर में भाषण करने के लिए बुलाया और फकीर बाबा को अमेरिका बुलाने का बार-बार आग्रह करने लगे। इन दोनों ही संस्थाओं के निमन्त्रण पर राम दयाल जी महाराज 'मामचन्द जी के साथ प्रथम बार अमेरिका गये। उनका यह सत्संग-दौरा बहुत ही कामयाब रहा। ए. आर. ई., योग सेंटर वर्जीनिया बीच, रोनोक लिचबर्ग और फ़िला-

डेल्टिफ्या, वाशिंगटन डी. सी. और न्यूयार्क के नाना केन्द्रों और गिरजाघरों में परम दयाल जी के सत्संग-प्रबचन हुए जिनका गहरा प्रभाव वहाँ के लोगों पर पड़ा और हजारों अमेरिकियों ने उनके सत्संगों से फँज हासिल किया । परम दयाल जी महाराज ने इस यात्रा के दौरान यह अनुभव किया कि अधिकांश अमेरिकी, ईश्वरनिष्ठ, भले, सफाई व अनुशासन-प्रिय और जिज्ञासु हैं ।

ए. आर. ई. ने परम दयाल जी महाराज और मामचन्द जी के ठहरने का प्रबन्ध वर्जोनिया बीच के एक बहुत ही बढ़िया होटल में किया था किन्तु महाराज ने होटल में न रहकर किसी सत्संगी के घर रहने की इच्छा ज़ाहिर की । अतः उनके ठहरने का इन्तजाम वर्जोनिया बीच की अति श्रद्धालु महिला सुश्री ब्रैटी कैली और उनके पति कैप्टन श्री जाह्न कर्ट कैली के, समुद्र तट पर बने मकान में कर दिया गया । ब्रैटी कैली रात-दिन परम दयाल जी महाराज की सेवा में लगी रहतीं जिससे प्रसन्न होकर महाराज जी ने उन्हें, उनके पति और बच्चों को खूब आशीर्वाद दिया । महाराज जी प्यार से ब्रैटी कैली को बेटी कहकर बुलाते ।

न्यूपोर्ट न्यूज, वर्जोनिया के प्रसिद्ध डाक्टर जेसन मैकलैनन और उनकी विदूषी पत्नी श्रीमती जी ने मैकलैनन की सेवाओं से भी परम दयाल जी महाराज बहुत प्रभावित हुए । श्रद्धालु जीन पूरे दो हफ्ते अपना घर-बार का ध्यान तज कर अपनी आलीशान कार में महाराज जी



और श्री मामचन्द जी तथा हजूर मानव दयाल जी महाराज और भाग्य माता जी को जगह-जगह घुमाती रही। जीन मैकलैनन को बदौलत ही परम दयाल जी महाराज सभी नगरों में अपने-अपने सत्संग दे सके। न्यूजर्सी के श्री टामक्रास और उनकी पत्नी जीनक्रास तथा उनकी बेटियों (डायना और केरल) ने भी महाराज जी को प्रभावित कर, उनसे खूब आशीर्वाद लिया। फोरस्ट वर्जीनिमा के डाक्टर विलियम मैकेव और श्रीमती ऐनिस मैकेव ने भी अपने घर में महाराज जी का सत्संग कराया और अपने पाँचों बच्चों सहित खूब आशीर्वाद लिया। इसी प्रकार बेडफोर्ड वर्जीनिया के कलाकार दम्पति श्री केन कनियर और श्रीमती मेरो के घर भी सत्संग हुआ। कलाकार श्री राबर्ट विलिस और उनकी विदूषी पत्नी जीन के घर भी परम दयाल जी महाराज ने दो दिन रहकर उन्हें सत्संग और आशीर्वाद दिया।

इस प्रकार परम दयाल जी महाराज ने अपनी प्रथम अमेरिका यात्रा में ही हजारों अमेरिकी भक्तों पर अपनी अमिट छाप छोड़ी और उन्हें हृदय से आशीर्वाद दिया। स्थान की कमी के कारण हम चाहते हुए भी अनेक भक्तों से नाम यहां नहीं दे पा रहे हैं, जिसके लिए हम क्षमा चाहते हैं। परम दयाल जी महाराज के अमेरिका आने से पूर्व भी कई अमेरिकियों ने उनके रूप को अमेरिका में प्रकट होते देखा था और अमेरिका से चले जाने के बाद भी ऐसी अनेक चमत्कारिक घटनायें घटीं।

1976, 1978 और 1980 में परम दयाल जी महाराज के डाक्टर परसराम अग्रवाल के साथ अमेरिका के तीन दौरे हुए। परिणाम स्वरूप अमेरिका में सत्संगियों की संख्या निरन्तर बढ़ती ही गई। साथ-साथ भारतीय प्रवासी सत्संगियों की संख्या भी काफी बढ़ी और महाराज जी के सत्संग से अधिकाधिक लाभ उठाया। 1980 में परम दयाल जी महाराज ने अमेरिका के अलावा कनेडा, इंग्लैण्ड और जर्मनी में भी सत्संग-दौरे किये। इस बार महाराज जी विशेष रूप से दो हफ्ते तक लगातार हजूर मानव दयाल जी महाराज के घर पर ही रहे और हजूर को विशेष सत्संग दिये। भाग्य माता जी को भी उन्हें निकट से देखने का मौका मिला और परम दयाल जी के प्रति उनमें अपार श्रद्धा बढ़ गई। माता जी ने तभी हजूर मानव दयाल जी महाराज के साथ-साथ जीवन-भर हजुरी मिशन की सेवा करते रहने का संकल्प लिया, जिसे वे प्राण-पण से निभाने में रात-दिन लगी रहती है।

परमदयाल जी महाराज की इस बार की अमेरिकी यात्रा की सबसे महत्वपूर्ण उपलब्धि यह हुई कि जिस निगूढ़तम अध्यत्मिक रहस्य का खोज और अभिव्यक्ति में अनगिनत विचारकों, दार्शनिकों, ऋषियों, महापण्डितों और सन्तों ने अपने जीवन खपाकर पौथे के पौथे लिख डाले और जिस अनन्त सत्ता की व्याख्या करते हुए सभी ने नकारात्मक अर्थात् 'नहीं-नहीं' शब्द का प्रयोग किया, जिस सत्य को जानने के लिए पश्चिम के महान्तम विचारक



लगातार खोज कर रहे हैं, किन्तु अन्त में सभी इस फँसले पर पहुँचे हैं कि उसे पूरी तरह जाना नहीं जा सकता. उस अनन्त सत्ता के गुप्त रहस्य को हज़ूर मानव दयाल जी महाराज ने परम दयाल जी महाराज के इस बार के सत्संग में एकदम समझ लिया, जिसे मौज में आकर हज़ूर कभी-कभी अपने सत्संग-प्रवचनों में जाहिर करते रहते हैं ।

देखने में यह है कि इस अनन्त परमसत्ता की व्याख्या करते हुए प्रायः सभी विचारक या साधक नकारात्मक यानि की 'नहीं'—'नहीं', शब्दों का प्रयोग करते हैं । वेदों में इसे असत् कहा गया है उपनिषदों में इसे 'नेति-नेति' कहा गया है और बाइबिल में 'बिल्कुल भिन्न' कहा गया है। योरोप के आधुनिक महान् दार्शनिक सार्त्र और हेडगर ने उसे 'कुछ नहीं' (Nothingness) कहा है । परिणाम-स्वरूप 'नहीं'—'नहीं' की इन नकारात्मक व्याख्याओं को पढ़ने से मनुष्य नास्तिक हो जाता है क्योंकि यदि वह परम-सत्ता 'कुछ नहीं' है तो उसका मतलब तो यह निकलता है कि उसका अस्तित्व ही नहीं है और वह महज एक कोरी कल्पना-मात्र है। भगवान् बुद्ध का शून्य-वाद, अर्थात् 'कुछ नहीं' या 'खालीपन' का भाव भी लोगों को भ्रम में डाल देता है जिससे लोभ समझने हैं कि ईश्वर की सत्ता ही नहीं है ।

किन्तु जब परम दयाल जी महाराज ने हज़ूर मानव दयाल जी महाराज के घर पर, अपने अनुभव के आधार

पर, इस 'कुछ नहीं' की बारम्बार व्याख्या की तो हज़ूर एकदम इस "कुछ नहीं" के यथार्थभाव को समझ गए कि 'कुछ नहीं' का मतलब नास्तिकवाद बिलकुल नहीं है। परम दयाल जी महाराज की 'कुछ नहीं' की व्याख्या इस प्रकार है—

‘अब मैं शब्द और प्रकाश से भी बिलकुल परे चला जाता हूँ। हफ्ते में एक या दो बार जब मैं उस अवस्था में चला जाता हूँ तो वहाँ उस तत्त्व को देखता हूँ जो प्रकाश को देखता और शब्द को सुनता है। उस हालत में जाने पर ऐसा लगता है कि मैं चेतन के समुद्र का एक बुलबुला हूँ। वहाँ मैं अपने आपे को खो जाता हूँ। वहाँ “मैं” नहीं रहती। न वहाँ देखने वाला होता है, न दिखने वाली कोई चीज़ होती है। वहाँ कुछ नहीं होता। किन्तु फिर भी वह है ! है ! है ! क्योंकि यदि वह कुछ नहीं होता, या खाली होता, तो मैं उससे वापिस नहीं लौट सकता। लेकिन चूँकि मैं वहाँ से वापिस आ जाता हूँ, इससे यह सिद्ध हो जाता है कि वह 'कुछ नहीं' शून्य नहीं है, बल्कि वह है।

परम दयाल जी महाराज की 'कुछ नहीं' की इस सुन्दर, यथार्थ किन्तु सरल-सादे शब्दों में की गई व्याख्या से हज़ूर मानव दयाल जी महाराज रोमाञ्चित हो गए। एक दार्शनिक की हैसियत में उनकी 'कुछ नहीं' की गुत्थी एकबारगी सुलझ गई और रस्तीभर भी शक नहीं रहा कि परमदयाल पण्डित फकीरचन्द जी महाराज सन्त सद्गुरु वक्त और परम तत्त्व के अवतार हैं।



1980 के इस दौर में हजूर मानव दयाल जी महाराज की परम दयाल जी महाराज से अनेक गूढ़तम विषयों पर विस्तारपूर्वक बात हुई। उनकी परम दया से हजूर के मन के सभी संशय मिट गये। उन्होंने हजूर को अमेरिका में कुछ वर्ष और रहकर अंग्रेजी भाषा में कुछ ऐसी पुस्तकें लिखने को कहा, जिससे पश्चिम के जिज्ञासु लोगों को आध्यात्मिक लाभ हो सके। हजूर ने यह निश्चय कर लिया कि परम दयाल जी महाराज के मिशन को आगे चलाना है और ऐसी पुस्तकें लिखनी हैं जिनमें, परम दयाल जी महाराज द्वारा दी गई व्याख्याओं के आधार पर, ईश्वर, धर्म, मनुष्य का यथार्थरूप और उसके जीवन के उद्देश्यों के बारे में सरल-सुबोध लोक-भाषा में व्याख्या की गई हो। हजूर ने सबसे पहिले दो पुस्तकें लिखने का निश्चय किया, जिनमें प्रथम 'सिद्ध-सत्-पुरुष फकीर बाबा' और दूसरी 'धर्मों से परे धर्म' हैं। परम दयाल जी महाराज ने हजूर के विचारों को पसन्द किया और उनको सफलता का आशीर्वाद दिया। 'सिद्ध सत्-पुरुष फकीर ककीर बाबा' दिल्ली के आत्मा राम एण्ड सन्ज के यहां से प्रकाशित हुई जिसका आध्यात्मिक जगत् में बहुत ही स्वागत हुआ और लाखों जिज्ञासु लोगों को उद्बोधन मिला। 'धर्मों से परे धर्म' प्रकाशित होने ही अध्यात्म जगत् में हलचल मचा देगा और विश्व को कल्याण का संहज मार्ग दर्शायेगा।

परम दयाल जी महाराज हजूर मानव दयाल जी महाराज और सभी सन्तों का यह अमर सन्देश न केवल

भारत के, बल्कि सम्पूर्ण मानव-मात्र के कल्याण का सत्य सन्देश है जो विश्व-शान्ति, अन्तराष्ट्रीय सहयोग और सभी मजहबों में आपसी मेल-जोल लायेगा। यह अमर सन्देश निराशा में आशा, अन्धकार में प्रकाश, विषमता में समता और विश्व में सच्ची शान्ति का मार्ग-दर्शक और पथ-प्रशस्ता है। यही परम दयाल जी महाराज को वह नई, सच्ची आध्यात्मिक शिक्षा है जो मानवता और विश्व को टुकड़े-टुकड़े होने से बचायेगी। धर्म के नाम पर आज जो मानवता लाखों टुकड़ों में बंट गई है, उसे और अधिक टुकड़े होने से बचाता तथा सच्चे धर्म की रोशनी में उसे परस्पर प्रेम-प्यार के सूत्र में फिर से पिरो कर एक करना निहायत जरूरी है, जिस महान् पुनीत कर्तव्य के पूरा करने में परमसन्त सद्गुरु हजूर मानव दयाल जी महाराज आज अपना सुख-चैन हराम करके रात-दिन एक कर रहे हैं। इसी महान् सन्देश के बीजारोपण के निमित्त दाता दयाल जी महाराज स्वयं 1911 में अपनी विश्व-यात्रा के सिलसिले में अमेरिका और योरोप गये थे। उन्हें पूर्ण विश्वास था कि उनके परम शिष्य फकीर एवं उनके आध्यात्मिक पौत्र हजूर मानव दयाल जी विश्व-कल्याण के लिए इस सच्चाई को अवश्य ही फैलायेंगे, अन्यथा इस विश्व और मानवता को सर्वनाश से कोई बचा नहीं सकेगा।

धन्य हैं परम दयाल जी महाराज और कोटि-कोटि, प्रमाण है हजूर मानव दयाल जी महाहाज के कमल-चरणों को, जो विश्व के कोने-कोने में सच्ची शान्ति का अमर सन्देश पहुंचाने के लिए अनवरत यात्रा करते नहीं थकते। ★



# इन्शानी प्रकृति का आदेश

परमसन्त परमदयाल

पण्डित फकीर चन्द जी महाराज

प्रत्येक समझदार मनुष्य की इच्छा क्या है ? इस प्रश्न के उत्तर की ओर कम व्यक्तियों का ध्यान जाता है। यदि सोच-विचार से काम लिया जाये और इसका उत्तर समझ में आ जाये तो हर एक मनुष्य की जिन्दगी में अमी परिवर्तन आ जाये।

न प्रश्न जटिल है न इसका उत्तर कठिन है। प्रश्न तो मुश्किल से ही किसी की ज़वान पर आता होगा परन्तु उत्तर व्यावहारिक रूप में प्रतिदिन प्रकट होता रहता है।

मनुष्य की इच्छा केवल खुशी प्राप्त करने की है। वह खुश रहे। मनुष्य खुश होने तथा खुशी के समुद्र में हर समय डुबकी लगाने का इच्छुक रहता है। इस के सिवाय और किसी बात की इसे इच्छा नहीं रहती और जितने कारोबार में व्यस्त, परिश्रम करना, दौड़-धूप और संघर्ष आदि के दृश्य दिखाई देते हैं सबको तह में और सबकी आत्मा में केवल इसी खुशी का भाव छिपा रहता है।  
खुशी का तत्व उसमें स्वाभाविक है। और यही नहीं बल्कि धर्म, शासन का ढंग, रहन-सहन का ढग, जातिवाद,

ज्ञान और संगत आदि सब हो का आधार केवल इन्सानी खुशी का भाव है। यह असल है और शेष सब नकल हैं। यह पूर्ण है, शेष सब अंश हैं।

हम क्यों पढ़ते, लिखते हैं ? केवल खुशी की प्राप्ति के लिए ! हम क्यों आपस में लड़ते-झगड़ते रहते हैं ? केवल खुशी प्राप्त करने के लिए ! हम क्यों विवाह करते हैं ? केवल इसीलिए। हम क्यों सभ्यता तथा नैतिकता के इच्छुक हैं ? केवल खुशी के लिए। हम क्यों ईश्वर की पूजा, परमात्मा का भजन, ब्रह्म की उपासना, देवताओं की आराधना, योग की क्रिया, ज्ञान, ध्यान का साधन, वेदों का पाठ और कुरान का अध्ययन करते हैं ? केवल इसी खुशी की लालसा, खुशी की तलाश तथा खुशी की पूर्ति के लिए। यदि खुशी की इच्छा न होती तो ईश्वर, खुदा, ब्रह्म, धर्म, ज्ञान, ध्यान सब एक ओर पड़े रहते और निरर्थक रहते। हम खुदा, ईश्वर और ब्रह्म तक को अपनी खुशी के आधीन रखना चाहते हैं और इन सबको इसकी प्राप्ति का साधन बनाना चाहते हैं।

सुनने वालों को सुनकर आश्चर्य होगा कि ईश्वर तक का अस्तित्व हमारी खुशी के आधीन है। खुशी मुख्य है। वह गौण है। खुशी महत्वपूर्ण है। खुशी आवश्यक है, शेष सब वस्तुएं अनावश्यक हैं। यदि किसी और युक्ति से हमें खुशी मिलती तो शायद हम भूलकर भी भजन, बन्दगी, पूजा, उपासना तथा कर्म न करते और ईश्वर की दया की इच्छा को अपने दिल में प्रविष्ट न होने देते।



यह इतनी सच्ची बात है कि चाहे कोई लाख प्रयत्न करे इसे छुटला नहीं सकता। हजार कोई विद्या और बुद्धि की दलीलों से काम ले परन्तु इसका खण्डन करना वहन कठिन है। कोई चाहे सारी आयु कुछ भी कहता फिरता रहे परन्तु यह एक ऐसा सच्चा विषय है कि कोई दार्शनिक, बुद्धिमान् और तपस्वी इसको झूठा सिद्ध नहीं कर सकता। मार्ग से भटका हुआ मनुष्य डर के मारे सच्चाई को अपनाने से काँपता है। बात उसकी समझ में आ भी जाती है लेकिन उसके मानने से उसकी जान निकलती है। जान लाख निकले, तन बेकाम हो जाये, हड्डियाँ चूर-चूर कर दी जायें लेकिन सच्चाई, सच्चाई है। साँच का आँच नहीं और खुशी वह ठोस सच्चाई है कि उसके ऊँचे सिर को दलील का हथोड़ा, मजहब का हथकण्डा और इन्सानी बुद्धि को डण्डा नीचा नहीं कर सकता।

सांसारिक और सामाजिक धर्म हमारी आँखों पर पट्टी बान्धकर हमें कोल्हू का वेल बनाना चाहते हैं। लेकिन उनको सफलता आज तक न कभी हुई और न हो सकती है और न होगी, खुशी का पलड़ा सदैव झुका रहेगा और अज्ञानता के पल्ले के उठते ही वह जोर-शोर के साथ प्रकट होती रहेगी।

ऋषि सब से अधिक जोरदार ढंग में इसका उपदेश सुना गए हैं। बृहदारण्यक उपनिषद् में याज्ञवल्क्य ऋषि ने अपनी स्त्री मैत्रेयी को यही विषय समझाया है और इसी को सब कर्म, धर्म, व्यवहार, परमार्थ और सांसारिक कारोबार का मूल कारण ठहराया है। वे कहते हैं :—

“ऐ मैत्रेयि ! पति, पति की दृष्टि से प्यारा नहीं बल्कि आत्मा की दृष्टि से प्यारा है । ऐ मैत्रेयि ! लड़का, लड़के की दृष्टि से प्यारा नहीं बल्कि आत्मा की दृष्टि से प्यारा है । पत्नी, पत्नी की दृष्टि से प्यारी नहीं बल्कि आत्मा की दृष्टि से प्यारी है । वेद, वेद की दृष्टि से प्यारे नहीं बल्कि आत्मा की दृष्टि से प्यारे हैं । ईश्वर, ईश्वर की दृष्टि से प्यारा नहीं बल्कि आत्मा की दृष्टि से प्यारा है । इसी तरह जो कुछ है व होगा, वह अपनी नज़र से प्यारा है और यही आत्मा को जानने और समझने का विषय है ।”

इस माननीय पुस्तक में इस पर बहुत पृष्ठ लिखे गए हैं और पढ़ने वाले हमारी बात पर बिना तर्क-वितर्क स्वयं ही परिणाम निकालें कि यह ठीक और सच्ची है या झूठ और ग़लत है !

यह आत्मा है क्या वस्तु ? केवल हमारी अपनी खुशी है । आत्मा कहते किस को हैं ? केवल खुशी को । तत्व क्या वस्तु है ? केवल खुशी । सार तत्व का उद्देश्य क्या है ? केवल खुशी और खुशी के सिवाय कुछ नहीं, न हो सकती है और न होगी । यही सब कुछ है और इसी के सहारे सारे खेल होते रहते हैं । प्राकृतिक प्रबन्ध का केन्द्र खुशी है । दोनों लोकों का आधार केवल इसी पर है । यह न होती तो कुछ न होता । खुशी ही वह वस्तु है जिसने आरम्भ से लेकर अन्त तक अपने प्रकट रूप का तमाशा दिखा रखा है । उत्पत्ति तथा प्रलय, मृत्यु तथा जीवन सृष्टि तथा अस्थिति का आधार केवल खुशी है ।



खुशी अस्तित्व है, शेष सब गुण हैं। खुशी ब्रह्म है, शेष सब माया है। खुशी रहमान है, इसके सिवाय सब शैतान हैं। खुशी ही का नाम परमात्मा है और शेष सब शैतान हैं।

वेदान्ती कहता है “अहं मय्यम्, चित्यम्, आनन्दम्”। सूफी कहता है ‘जात ही ऐन-इल्म, ऐन हस्ती और ऐन सख्ख है’। ‘मंसूर’ जिसका वर्णन प्रायः आता है अनालहक का शोर मचाता हुआ सूली पर चढ़ गया। वह यही जज़्बा था जिसके लिए, जिसके नाम पर और जिसके हम देश, कीम, ज्ञान, बुद्धि आदि सब कुछ न्योच्छावर करने को तैयार हो जाते हैं। वह ओर कुछ नहीं केवल हमारी जात और हमारी जात की अपनी खुशी है। यही हमारा रूप है, यही हमारी आत्मा है, यही हमारी असली हस्ती, ज्ञान और सख्ख है। यही सत्, चित् और आनन्द है।

नारायण दास डोगरा  
परमदयाल सर्वहितकारी मानवता मन्दिर,  
फकी स्थाम, सरड़ डोगरी,  
बरास्ता रक्कड़, जिला कांगड़ा  
हिमाचल प्रदेश।

(क्रमशः)



## ★ एक आवश्यक निवेदन ★

(मानव मन्दिर पत्रिका के माननीय पाठकों से :

कृपया नीचे सूचित बातों पर ध्यान दें ताकि आप तक यह पत्रिका नियमित पहुंचाने की सेवा ठीक प्रकार की जा सके—

1. पत्रिका प्राप्ति सम्बन्धी पत्र-व्यवहार में अपना सदस्यता प्रयोगन क्रमांक साफ लिखना न भूले ।
2. वर्ष में कम-से-कम एक बार अपना पूरा डाक पता पिन-कोड सहित बड़े रोमन अक्षरों में साफ-साफ लिखकर अथवा किसी से लिखवाकर अपने क्रमांक सहित अवश्य सूचित करें ।
3. एक वर्ष में एक से अधिक बार डाक पता बदलवाने के लिए आग्रह न करें ।
4. (मानव मन्दिर) प्राप्ति बन्द करने की सूचना अवश्य दें ।
5. पत्रिका के सम्बन्ध में पत्र-व्यवहार करते समय अपनी ग्राहक संख्या जरूर लिखें ।

जनरल सेक्रेटरी



## महत्वपूर्ण सूचना

सभी सत्संगियों को सूचित किया जाता है कि मानवता मन्दिर के आफिस में एक और TELEPHONE लग गया है।

जिसका No. 01882-22766 है।

अगर कोई सत्संगी भाई किसी भी विषय पर जानकारी लेना चाहे तो कृपया उक्त दिए गए TELEPHONE No. पर सुबह 6 बजे से रात 9 बजे तक सम्पर्क कर सकते हैं।

Before 8 a. m.

After 9 p.m.

32076 जनरल सेक्रेटरी

जनरल सेक्रेटरी

मानवता मन्दिर,

होशियारपुर।

## आवश्यक सूचना

सभी सत्संगीजन को सूचित किया जाता है, कि मानवता मन्दिर के सम्बन्ध में या मानवता मन्दिर के नाम पर किसी भी व्यक्ति विशेष अथवा कर्मचासी या अधिकारी को कोई धन शाशी या कोई वस्तु न दें। ऐसी अवस्था में आप मानवता मन्दिर, होशियारपुर के इस फोन नम्बर 01882-27266 पर सम्पर्क कर सकते हैं।

मानवता मन्दिर, होशियारपुर को चैक, ड्राफ्ट आदि भेजते समय केवल फकीर लायब्रयेरी चैरीटेबल ट्रस्ट के नाम पर ही भेजे अथवा किसी व्यक्ति के नाम पर नहीं।

---

### शुद्धि पत्र

मानव मन्दिर के पृष्ठ 64 पर छपे फोन नम्बर अशुद्ध 01882-22766 के स्थान पर शुद्ध 01882-27266 पढ़ा जाए।

---

मानवता मन्दिर, होशियारपुर में अगला मासिक सत्संग 19-10-1997 को आचार्यवर हजूर विजय नरेश वैगो जी महाराज फरमावेंगे।

जनरल सेक्रेटरी

मानवता मन्दिर,  
होशियारपुर।



**BOOK POST**

**Regd NO. 26265/74**

**OCT 10 th 1997**

**MANAV MANDIR**

**PB H-5**



**Address**

223 Sh. SATYANARAYN AGARWAL  
KASHI-MOMOSO BHAWAN  
ASI-VARANSI (UP)  
44446

**MANAVTA MANDIR**

**SUTEHRI ROAD**

**HOSHIARPUR 146001**

**22639 Resi.**

**PHONE. No. 01882-27266 Office**

**Shiv Dev Rao Press Manavta Mandir (Pb.)**